

# अलंकार

प्रेमचंद

## अध्याय 1

उन दिनों नील नदी के तट पर बहुतसे तपस्वी रहा करते थे। दोनों ही किनारों पर कितनी ही झोंपड़ियां थोड़ीथोड़ी दूर पर बनी हुई थीं। तपस्वी लोग इन्हीं में एकान्तवास करते थे और जरूरत पड़ने पर एकदूसरे की सहायता करते थे। इन्हीं झोंपड़ियों के बीच में जहांतहां गिरजे बने हुए थे। परायः सभी गिरजाघरों पर सलीब का आकार दिखाई देता था। धर्मोत्सवों पर साधुसन्त दूरदूर से वहां आ जाते थे। नदी के किनारे जहांतहां मठ भी थे। जहां तपस्वी लोग अकेले छोटीछोटी गुफाओं में सिद्धि पराम करने का यत्न करते थे।

यह सभी तपस्वी बड़ेबड़े कठिन वरत धारण करते थे, केवल सूयास्त के बाद एक बार सूक्ष्म आहार करते। रोटी और नमक के सिवाय और किसी वस्तु का सेवन न करते थे। कितने ही तो समाधियों या कन्दराओं में पड़े रहते थे। सभी बरह्मचारी थे, सभी मिताहारी थे। वह ऊन का एक कुरता और कनटोप पहनते थे; रात को बहुत देर तक जागते और भजन करने के पीछे भूमि पर सो जाते थे। अपने पूर्वपुरुष के पापों का परायश्चित करने के लिए वह अपनी देह को भोगविलास ही से दूर नहीं रखते थे, वरन उसकी इतनी रक्षा भी न करते थे जो वर्तमानकाल में अनिवार्य समझी जाती है। उनका विश्वास था कि देह को जितना कष्ट दिया जाए, वह जितनी रुग्णावस्था में हो, उतनी ही आत्मा पवित्र होती है। उनके लिए को और फोड़ों से उत्तम शृंगार की कोई वस्तु न थी।

इस तपोभूमि में कुछ लोग तो ध्यान और तप में जीवन को सफल करते थे, पर कुछ ऐसे लोग भी थे जो ताड़ की जटाओं को बटकर किसानों के लिए रस्सियां बनाते या फल के दिनों में कृषकों की सहायता करते थे। शहर के रहने

वाले समझते थे कि यह चोरों और डाकुओं का गिरोह है, यह सब अरब के लुटेरों से मिलकरा काफिलों को लूट लेते हैं। किन्तु यह भ्रम था। तपस्वी धन को तुच्छ समझते थे, आत्मोद्धार ही उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य था। उनके तेज की ज्योति आकाश को भी आलोकित कर देती थी।

स्वर्ग के दूत युवकों या यात्रियों का वेश रहकर इन मठों में आते थे। इसी प्रकार राक्षस और दैत्य हब्सियों या पशुओं का रूप धरकर इस धमार्श्रम में तपस्वियों के बहकाने के लिए विचरा करते थे। जब ये भक्त गण अपनेअपने घड़े लेकर परातःकाल सागर की ओर पानी भरने जाते थे तो उन्हें राक्षसों और दैत्यों के पदचिह्न दिखाई देते थे। यह धमार्श्रम वास्तव में एक समरक्षेत्र था जहां नित्य और विशेषतः रात को स्वर्ग और नरक, धर्म और अधर्म में भीषण संग्राम होता रहता था। तपस्वी लोग स्वर्गदूतों तथा ईश्वर की सहायता से वरत, ध्यान और तप से इन पिशाचसेनाओं के आघातों का निवारण करते थे। कभी इन्द्रियजनित वासनाएं उनके मर्मस्थल पर ऐसा अंकुश लगाती थीं कि वे पीड़ा से विकल होकर चीखने लगते थे और उनकी आर्तध्वनि वनपशुओं की गरज के साथ मिलकर तारों से भूषित आकाश तक गूंजने लगती थी। तब वही राक्षस और दैत्य मनोहर वेश धारण कर लेते थे, क्योंकि यद्यपि उनकी सूरत बहुत भयंकर होती है पर वह कभीकभी सुन्दर रूप धर लिया करते हैं जिसमें उनकी पहचान न हो सके। तपस्वियों को अपनी कुटियों में वासनाओं के ऐसे दृश्य देखकर विस्मय होता था जिन पर उस समय धुरन्धर विलासियों का चित्त मुग्ध हो जाता। लेकिन सलीब की शरण में बैठे हुए तपस्वियों पर उनके परलोभनों का कुछ असर न होता था, और यह दुष्टात्माएं सूयोर्दय होते ही अपना यथार्थ रूप धारण करके भाग जाती थीं। कोई उनसे पूछता तो कहते 'हम इसलिए रो रहे हैं कि तपस्वियों ने हमको मारकर भगा दिया है।'

धमार्श्रम के सिद्धपुरुषों का समस्त देश के दुर्जनों और नास्तिकों पर आतंकसा छाया हुआ था। कभीकभी उनकी धर्मपरायणता बड़ा विकराल रूप धारण कर लेती थी। उन्हें धर्मस्मृतियों ने ईश्वरविमुख पराणियों को दण्ड देने का अधिकार परदान कर दिया था और जो कोई उनके कोप का भागी होता था उसे संसार की कोई शक्ति बचा न सकती थी। नगरों में, यहां तक कि इस्कन्द्रिया में भी, इन भषण यन्त्रणाओं की अद्भुत दन्तकथाएं फैली हुई थीं। एक महात्मा ने कई दुष्टों को अपने सोटे से मारा, जमीन फट गयी और वह उसमें समा गये। अतः दुष्टजन, विशेषकर मदारी, विवाहित पादरी और वेश्याएं, इन तपस्वियों से थरथर कांपते थे।

इन सिद्धपुरुषों के योगबल के सामने वनजन्तु भी शीश झुकाते थे। जब कोई योगी मरणासन्न होता तो एक सिंह आकर पंजों से उसकी कबर खोदता था इससे योगी को मालूम होता था कि भगवान उसे बुला रहे हैं। वह तुरन्त जाकर अपने सहयोगियों के मुख चूमता था। तब कबर में आकर समाधिस्थ हो जाता था।

अब तक इस तपाश्रम का परधान एण्तोनी था। पर अब उसकी अवस्था सौ वर्ष की हो चुकी थी। इसीलिए वह इस स्थान को त्याग कर अपने दो शिष्यों के साथ जिनके नाम मकर और अमात्य थे, एक पहाड़ी में विश्राम करने चला गया था। अब इस आश्रम में पापनाशी नाम के एक साधू से बड़ा और कोई महात्मा न था। उसके सत्कर्म्मों की कीर्ति दूरदूर फैली हुई थी और कई तपस्वी थे जिनके अनुयायियों की संख्या अधिक थी और जो अपने आश्रमों के शासन में अधिक कुशल थे। लेकिन पापनाशी वरत और तप में सबसे ब्रा हुआ था, यहां तक कि वह तीनतीन दिन अनशन वरत रखता था रात को और परातःकाल अपने शरीर को बाणों से छेदता था और वह घण्टों भूमि पर मस्तक नवाये पड़ा रहता था।

उसके चौबीस शिष्यों ने अपनीअपनी कुटिया उसकी कुटी के आसपास बना ली थीं और योगक्रियाओं में उसी के

अनुगामी थे। इन धर्मपुत्रों में ऐसेऐसे मनुष्य थे जिन्होंने वर्षों डकैतियां डाली थीं, जिनके हाथ रक्त से रंगे हुए थे, पर महात्मा पापनाशी के उपदेशों के वशीभूत होकर अब वह धार्मिक जीवन व्यतीत करते थे और अपने पवित्र आचरणों से अपने सहवर्गियों को चकित कर देते थे। एक शिष्य, जो पहले हब्श देश की रानी का बावरची था, नित्य रोता रहता था। एक और शिष्य फलदा नाम का था जिसने पूरी बाइबिल कंठस्थ कर ली थी और वाणी में भी निपुण था। लेकिन जो शिष्य आत्मशुद्धि में इन सबसे ब्रकर था वह पॉल नाम का एक किसान युवक था। उसे लोग मूर्ख पॉल कहा करते थे, क्योंकि वह अत्यन्त सरल हृदय था। लोग उसकी भोलीभाली बातों पर हंसा करते थे, लेकिन ईश्वर की उस पर विशेष कृपादृष्टि थी। वह आत्मदर्शी और भविष्यवक्ता था। उसे इलहाम हुआ करता था।

पापनाशी का जन्मस्थान इस्कन्द्रिया था। उसके मातापिता ने उसे भौतिक विद्या की ऊंची शिक्षा दिलाई थी। उसने कवियों के शृंगार का आस्वादन किया था और यौवनकाल में ईश्वर के अनादित्व, बल्कि अस्तित्व पर भी दूसरों से वादविवाद किया करता था। इसके पश्चात कुछ दिन तक उसने धनी पुरुषों के परथानुसार ऐन्द्रिय सुखभोग में व्यतीत किये, जिसे याद करके अब लज्जा और ग्लानि से उसको अत्यन्त पीड़ा होती थी। वह अपने सहचरों से कहा करता 'उन दिनों मुझ पर वासना का भूत सवार था।' इसका आशय यह कदापि न था कि उसने व्यभिचार किया था; बल्कि केवल इतना कि उसने स्वादिष्ट भोजन किया था और नाट्यशालाओं में तमाशा देखने जाएं करता था। वास्तव में बीस वर्ष की अवस्था तब उसने उस काल के साधारण मनुष्यों की भांति जीवन व्यतीत किया था। वही भोगलिप्सा अब उसके हृदय में कांटे के समान चुभा करती थी। दैवयोग से उन्हीं दिनों उसे मकर ऋषि के सदुपदेशों को सुनने का सौभाग्य पराप्त हुआ। उसकी कायापलट हो गयी। सत्य उसके रोमरोम में व्याप्त हो गया, भाले के समान उसके हृदय में चुभ गया। बपतिस्मा लेने के बाद वह साल भर तक और भद्र पुरुषों में रहा, पुराने संस्कारों से मुक्त न हो सका। लेकिन एक दिन वह गिरजाघर में गया और वहां उपदेशक को यह पद गाते हुए सुना-'यदि तू ईश्वरभक्ति का इच्छुक है तो जा, जो कुछ तेरे पास हो उसे बेच डाल और गरीबों को दे दे।' वह तुरन्त घर गया, अपनी सारी सम्पत्ति बेचकर गरीबों को दान कर दी और धर्माश्रम में परविष्ट हो गया और दस साल तक संसार से विरक्त होकर वह अपने पापों का परायश्चित्त करता रहा।

एक दिन वह अपने नियमों के अनुसार उन दिनों का स्मरण कर रहा था, जब वह ईश्वरविमुख था और अपने दुष्कर्मों पर एकएक करके विचार कर रहा था। सहास याद आया कि मैंने इस्कन्द्रिया की एक नाट्यशाला में थायस नाम की एक रूपवती नटी देखी थी। वह रमणी रंगशालाओं में नृत्य करते समय अंगपरत्यंगों की ऐसी मनोहर छवि दिखाती थी कि दर्शकों के हृदय में वासनाओं की तरंगें उठने लगती थीं। वह ऐसा थिरकती थी, ऐसे भाव बताती थी, लालसाओं का ऐसा नग्न चित्र खींचती थी कि सजीले युवक और धनी वृद्ध कामातुर होकर उसके गृहद्वार पर फूलों की मालाएं भेंट करने के लिए आते। थायस उसका सहर्ष स्वागत करती और उन्हें अपनी अंकस्थली में आश्रय देती। इस प्रकार वह केवल अपनी ही आत्मा का सर्वनाश न करती थी, वरन दूसरों की आत्माओं का भी खून करती थी।

पापनाशी स्वयं उसके मायापाश में फंसतेफंसते रह गया था। वह कामतृष्णा से उन्मत्त होकर एक बार उसके द्वार तक चला गया था। लेकिन वारांगना के चौखट पर वह ठिठक गया, कुछ तो उठती हुई जवानी की स्वाभाविक कातरता के कारण और कुछ इस कारण कि उसकी जेब में रुपये न थे, क्योंकि उसकी माता इसका सदैव ध्यान रखती थी कि वह धन का अपव्यय न कर सके। ईश्वर ने इन्हीं दो साधनों द्वारा उसे पाप के अग्रिकुण्ड में गिरने से बचा लिया। किन्तु पापनाशी ने इस असीम दया के लिए ईश्वर को धन्यवाद दिया; क्योंकि उस समय उसके ज्ञानचक्षु बन्द थे। वह

न जानता था कि मैं मिथ्या आनन्दभोग की धुन में पड़ा हूँ। अब अपनी एकान्त कुटी में उसने पवित्र सलीब के सामने मस्तक झुका दिया और योग के नियमों के अनुसार बहुत देर तक थायस का स्मरण करता रहा क्योंकि उसने मूर्खता और अन्धकार के दिनों में उसके चित्त को इन्द्रियसुख-भोग की इच्छाओं से आन्दोलित किया था। कई घण्टे ध्यान में डूबे रहने के बाद थायस की स्पष्ट और सजीव मूर्ति उसके हृदयनेत्रों के आगे आ खड़ी हुई। अब भी उसकी रूपशोभा उतनी ही अनुपम थी जितनी उस समय जब उसने उसकी कुवासनाओं को उत्तेजित किया था। वह बड़ी कोमलता से गुलाब की सेज पर सिर झुकाये लेटी हुई थी। उसके कमलनेत्रों में एक विचित्र आर्द्रता, एक विलक्षण ज्योति थी। उसके नथुने फड़क रहे थे, अधर कली की भांति आधे खुले हुए थे और उसकी बांहें दो जलधाराओं के सदृश निर्मल और उज्ज्वल थीं। यह मूर्ति देखकर पापनाशी ने अपनी छाती पीटकर कहा-"भगवान तू साक्षी है कि मैं पापों को कितना घोर और घातक समझ रहा हूँ।"

धीरेधीरे इस मूर्ति का मुख विकृत होने लगा, उसके होंठ के दोनों कोने नीचे को झुककर उसकी अन्तर्वेदना को परकट करने लगे। उसकी बड़ीबड़ी आंखें सजल हो गयीं। उसका वृक्ष उच्छ्वासों से आन्दोलित होने लगा मानो तूफान के पूर्व हवा सनसना रही हो! यह कुतूहल देखकर पापनाशी को मर्मवेदना होने लगी। भूमि पर सिर नवाकर उसने यों परार्थना की-'करुणामय ! तूने हमारे अन्तःकरण को दया से परिपूरित कर दिया है, उसी भांति उसे परभात के समय खेत हिमकणों से परिपूरित होते हैं। मैं तुझे नमस्कार करता हूँ! तू धन्य है। मुझे शक्ति दे कि तेरे जीवों को तेरी दया की ज्योति समझाकर परेम करूं, क्योंकि संसार में सब कुछ अनित्य है, एक तू ही नित्य, अमर है। यदि इस अभागिनी स्त्री के परति मुझे चिन्ता है तो इसका कारण है कि वह तेरी ही रचना है। स्वर्ग के दूत भी उस पर दयाभाव रखते हैं। भगवान्, क्या यह तेरी ही ज्योति का परकाश नहीं है ? उसे इतनी शक्ति दे कि वह इस कुमारी को त्याग दे। तू दयासागर है, उसके पाप महाघोर, घृणित हैं और उनके कल्पनामात्र ही से मुझे रोमांच हो जाता है। लेकिन वह जितनी पापिष्ठा है, उतना ही मेरा चित्त उसके लिए व्यथित हो रहा है। मैं यह विचार करके व्यग्र हो जाता हूँ कि नरक के दूत अन्तकाल तक उसे जलाते रहेंगे।'

वह यही परार्थना कर रहा था कि उसने अपने पैरों के पास एक गीदड़ को पड़े हुए देखा। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि उसकी कुटी का द्वार बन्द था। ऐसा जान पड़ता था कि वह पशु उसके मनोगत विचारों को भांप रहा है वह कुत्ते की भांति पूंछ हिला रहा था। पापनाशी ने तुरन्त सलीब का आकार बनाया और पशु लुप्त हो गया। उसे तब ज्ञात हुआ कि आज पहली बार राक्षस ने मेरी कुटी में परवेश किया। उसने चित्तशान्ति के लिए छोटीसी परार्थना की और फिर थायस का ध्यान करने लगा।

उसने अपने मन में निश्चय किया ? 'हरीच्छा से मैं अवश्य उसका उद्धार करूंगा।' तब उसने विश्राम किया।

दूसरे दिन ऊषा के साथ उसकी निद्रा भी खुली। उसने तुरन्त ईशवंदना की और पालम सनत से मिलने गया जिनका आश्रम वहां से कुछ दूर था। उसने सन्त महात्मा को अपने स्वभाव के अनुसार परफुल्लचित्त से भूमि खोदते पाया। पालम बहुत वृद्ध थे। उन्होंने एक छोटीसी फुलवाड़ी लगा रखी थी। वनजन्तु आकर उनके हाथों को चाटते थे और पिशाचादि कभी उन्हें कष्ट न देते थे।

उन्होंने पापनाशी को देखकर नमसकार किया।

पापनाशी ने उत्तर देते हुए कहा-"भगवान तुम्हें शान्ति दे।"

पालम-'तुम्हें भी भगवान शान्ति दे।' यह कहकर उन्होंने माथे का पसीना अपने कुरते की अस्तीन से पोंछा।

पापनाशी-बन्धुवर, जहां भगवान की चचार होती है वहां भगवान अवश्य वर्तमान रहते हैं। हमारा धर्म है कि अपने सम्भाषणों में भी ईश्वर की स्तुति ही किया करें। मैं इस समय ईश्वर की कीर्ति परसारित करने के लिए एक परस्ताव लेकर आपकी सेवा में उपस्थिति हुआ हूं।

पालम-'बन्धु पापनाशी, भगवान तुम्हारे परस्ताव को मेरे काहू के बेलों की भांति सफल करे। वह नित्य परभात को मेरी वाटिका पर ओसबिन्दुओं के साथ अपनी दया की वर्षा करता है और उसके परदान किए हुए खोरों और खरबूजों का आस्वादन करके मैं उसके असीम वात्सल्य की जयजयकार मानता हूं। उससे यही याचना करनी चाहिए कि हमें अपनी शान्ति की छाया में रखे क्योंकि मन को उद्विग्न करने वाले भीषण दुरावेगों से अधिक भयंकर और कोई वस्तु नहीं है। जब यह मनोवेग जागृत हो जाते हैं तो हमारी दशा मतवालों कीसी हो जाती है, हमारे पैर लड़खड़ाने लगते हैं और ऐसा जान पड़ता है कि अब आँधे मुंह गिरे ! कभीकभी इन मनोवेगों के वशीभूत होकर हम घातक सुखभोग में मग्न हो जाते हैं। लेकिन कभीकभी ऐसा भी होता है कि आत्मवेदना और इन्द्रियों की अशांति हमें नैराश्यनद में डुबा देती हैं, जो सुखभोग से कहीं सर्वनाशक है। बन्धुवर, मैं एक महान पापी पराणी हूं, लेकिन मुझे अपने दीर्घ जीवनकाल में यह अनुभव हुआ है कि योगी के लिए इस मलिनता से बड़ा और कोई शत्रु नहीं है। इससे मेरा अभिपराय उस असाध्य उदासीनता और क्षोभ से है जो कुहरे की भांति आत्मा पर परदा डाले रहती है और ईश्वर की ज्योति को आत्मा तक नहीं पहुंचने देती। मुक्तिमार्ग में इससे बड़ी और कोई बाधा नहीं है, और असुरराज की सबसे बड़ी जीत यही है कि वह एक साधु पुरुष के हृदय में क्षुब्ध और मलिन विचार अंकुरित कर दे। यदि वह हमारे ऊपर मनोहर परलोभनों ही से आक्रमण करता तो बहुत भय की बात न थी। पर शोक ! वह हमें क्षुब्ध करके बाजी मार ले जाता है। पिता एण्टोनी को कभी किसी ने उदास या दुःखी नहीं देखा। उनका मुखड़ा नित्य फूल के समान खिला रहता था। उनके मधुर मुसकान ही से भक्तों के चित्त को शान्ति मिलती थी। अपने शिष्यों में कितने परसन्न मुसकान चित्त रहते थे। उनकी मुखकान्ति कभी मनोमालिन्य से धुंधली नहीं हुई। लेकिन हां, तुम किसी परस्ताव की चचार कर रहे थे ?'

पापनाशी-बन्धु पालम, मेरे परस्ताव का उद्देश्य केवल ईश्वर के माहात्म्य को उज्ज्वल करना है। मुझे अपने सद्परामर्श से अनुगृहीत कीजिए, क्योंकि आप सर्वज्ञ है और पाप की वायु ने कभी आपको स्पर्श नहीं किया।

पालम-बन्धु पापनाशी, मैं इस योग्य भी नहीं हूं कि तुम्हारे चरणों की रज भी माथे पर लगाऊं और मेरे पापों की गणना मरुस्थल के बालुकणों से भी अधिक है। लेकिन मैं वृद्ध हूं और मुझे जो अनुभव है, उससे तुम्हारी सहर्ष सेवा करूंगा।'

पापनाशी-'तो फिर आपसे स्पष्ट कह देने में कोई संकोच नहीं है कि मैं इस्कन्द्रियः में रहने वाली थायस नाम की एक पवित्र स्त्री की अधोगति से बहुत दुःखी हूं। वह समस्त नगर के लिए कलंक है और अपने साथ कितनी ही आत्माओं का सर्वनाश कर रही है।

पालम-'बन्धु पापनाशी, यह ऐसी व्यवस्था है जिस पर हम जितने आंसू बहायें कम हैं। भद्रश्रेणी में कितनी ही रमणियों का जीवन ऐसा ही पापमय है। लेकिन इस दुरवस्था के लिए तुमने कोई निवारणविधि सोची है ?'

पापनाशी-बन्धु पालम, मैं इस्कन्द्रिया जाऊंगा, इस वेश्या की तलाश करूंगा और ईश्वर की सहायता से उसका उद्धार करूंगा। यही मेरा संकल्प है। आप इसे उचित समझते हैं ?'

पालम-'पिरय बन्धु, मैं एक अधम पराणी हूं किन्तु हमारे पूज्य गुरु एण्टोनी का कथन था कि मनुष्य को अपना स्थान

छोड़कर कहीं और जाने के लिए उतावली न करनी चाहिए।'

पापनाशी-'पूज्य बन्धु, क्या आपको मेरा परस्ताव पसन्द नहीं है ?'

पालम-'पिरय पापनाशी, ईश्वर न करे कि मैं अपने बन्धु के विशुद्ध भावों पर शंका करूं, लेकिन हमारे श्रद्धेय गुरु एण्टोनी का यह भी कथन था कि जैसे मछलियां सूखी भूमि पर मर जाती हैं, वही दशा उन साधुओं की होती है जो अपनी कुटी छोड़कर संसार के पराणियों से मिलतेजुलते हैं। वहां भलाई की कोई आशा नहीं।'

यह कहकर संत पालम ने फिर कुदाल हाथ में ली और धरती गोड़ने लगे। वह फल से लदे हुए एक अंजीर के वृक्ष की जड़ों पर मिट्टी च़ा रहे थे। वह कुदाल चला ही रहे थे कि झाड़ियों में सनसनाहट हुई और एक हिरन बाग के बाड़े के ऊपर से कूदकर अन्दर आ गया। वह सहमा हुआ था, उसकी कोमल टांगें कांप रही थीं। वह सन्त पालम के पास आया और अपना मस्तक उनकी छाती पर रख दिया।

पालम ने कहा-'ईश्वर को धन्य है जिसने इस सुन्दर वनजन्तु की सृष्टि की।'

इसके पश्चात पालम सन्त अपने झोंपड़े में चले गये। हिरन भी उनके पीछेपीछे चला। सन्त ने तब ज्वार की रोटी निकाली और हिरन को अपने हाथों से खिलायी।

पापनाशी कुछ देर तक विचार में मग्न खड़ा रहा। उसकी आंखें अपने पैरों के पास पड़े हुए पत्थरों पर जमी हुई थीं। तब वह पालम सन्त की बातों पर विचार करता हुआ धीरेधीरे अपनी कुटी की ओर चला। उसके मन में इस समय भीषण संग्राम हो रहा था।

उसने सोचा-सन्त पालम की सलाह अच्छी मालूम होती है। वह दूरदर्शी पुरुष हैं। उन्हें मेरे परस्ताव के औचित्य पर संदेह है, तथापि थायस को घात पिशाचों के हाथों में छोड़ देना घोर निर्दयता होगी। ईश्वर मुझे परकाश और बुद्धि दे।

चलतेचलते उसने एक तीतर को जाल में फंसे हुए देखा जो किसी शिकारी ने बिछा रखा था। यह तीतरी मालूम होती थी, क्योंकि उसने एक क्षण में नर को जाल के पास उड़कर और जाल के फन्दे को चोंच से काटते देखा, यहां तक कि जाल में तीतरी के निकलने भर का छिद्र हो गया। योगी ने घटना को विचारपूर्ण नेत्रों से देखा और अपनी ज्ञानशक्ति से सहज में इसका आध्यात्मिक आशय समझ लिया। तीतरी के रूप में थामस थी, जो पापजाल में फंसी हुई थी, और जैसे तीतर ने रस्सी का जाल काटकर उसे मुक्त कर दिया था, वह भी अपने योगबल और सदुपदेश से उन अदृश्य बंधनों को काट सकता था जिनमें थामस फंसी हुई थी। उसे निश्चय हो गया कि ईश्वर ने इस रीति से मुझे परामर्श दिया है। उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया। उसका पूर्व संकल्प दृढ़ हो गया; लेकिन फिर जो देखा, नर की टांग उसी जाल में फंसी हुई थी जिसे काटकर उसने मादा को निवृत्त किया था तो वह फिर भ्रम में पड़ गया।

वह सारी रात करवटें बदलता रहा। उषाकाल के समय उसने एक स्वप्न देखा, थायस की मूर्ति फिर उसके सम्मुख उपस्थित हुई। उसके मुखचन्द्र पर कलुषित विलास की आभा न थी, न वह अपने स्वभाव के अनुसार रत्नजटिल वस्त्र पहने हुए थी। उसका शरीर एक लम्बीचौड़ी चादर से का हुआ था, जिससे उसका मुंह भी छिप गया था केवल दो आंखें दिखाई दे रही थीं, जिनमें से गांे आंसू बह रहे थे।

यह स्वप्नदृशदेखकर पापनाशी शोक से विह्वल हो रोने लगा और यह विश्वास करके कि यह दैवी आदेश है, उसका विकल्प शान्त हो गया। वह तुरन्त उठ बैठा, जरीब हाथ में ली जो ईसाई धर्म का एक चिह्न था। कुटी के बाहर

निकला, सावधानी से द्वारबन्द किया, जिसमें वनजन्तु और पक्षी अन्दर जाकर ईश्वरग्रन्थ को गन्दा न कर दें जो उसके सिरहाने रखा हुआ था। तब उसने अपने परधान शिष्य फलदा को बुलाया और उसे शेष तेईस शिष्यों के निरीक्षण में छोड़कर, केवल एक नीला चोगा पहने हुए नील नदी की ओर परस्थान किया। उसका विचार था कि लाइबिया होता हुआ मकदूनिया नरेश (सिकन्दर) के बसाये हुए नगर में पहुंच जाऊं। वह भूख, प्यास और थकन की कुछ परवाह न करते हुए परातःकाल से सूर्यास्त तक चलता रहा। जब वह नदी के समीप पहुंचा तो सूर्य क्षितिज की गोद में आश्रय ले चुका था और नदी का रक्तजल कंचन और अग्नि के पहाड़ों के बीच में लहरें मार रहा था।

वह नदी के तटवर्ती मार्ग से होता हुआ चला। जब भूख लगती किसी झोंपड़ी के द्वार पर खड़ा होकर ईश्वर के नाम पर कुछ मांग लेता। तिरस्कारों, उपेक्षाओं और कटुवचनों को परसन्नता से शिरोधार्य करता था। साधु को किसी से अमर्ष नहीं होता। उसे न डाकुओं का भय था, न वन के जन्तुओं का, लेकिन जब किसी गांव या नगर के समीप पहुंचता तो कतराकर निकल जाता। वह डरता था कि कहीं बालवृन्द उसे आंखमिचौली खेलते हुए न मिल जाएं अथवा किसी कुएं पर पानी भरने वाली रमणियों से सामना न हो जाए जो घड़ों को उतारकर उससे हासपरिहास कर बैठें। योगी के लिए यह सभी शंका की बातें हैं, न जाने कब भूतपिशाच उसके कार्य में विघ्न डाल दें। उसे धर्मग्रन्थों में यह पृकर भी शंका होती है कि भगवान नगरों की यात्रा करते थे और अपने शिष्यों के साथ भोजन करते थे। योगियों की आश्रमवाटिका के पुष्प जितने सुन्दर हैं, उतने ही कोमल भी होते हैं, यहां तक कि सांसारिक व्यवहार का एक झोंका भी उन्हें झुलसा सकता है, उनकी मनोरम शोभा को नष्ट कर सकता है। इन्हीं कारणों से पापनाशी नगरों और बस्तियों से अलगअलग रहता था कि अपने स्वजातीय भाईयों को देखकर उसका चित्त उनकी ओर आकर्षित न हो जाए।

वह निर्जन मार्गों पर चलता था। संध्या समय जब पक्षियों का मधुर कलरव सुनाई देता और समीर के मन्द झोंके आने लगते तो अपने कनटोप को आंखों पर खींच लेता कि उस पर परकृतिसौन्दर्य का जादू न चल जाए। इसके परतिकूल भारतीय ऋषिमहात्मा परकृतिसौन्दर्य के रसिक होते थे। एक सप्ताह की यात्रा के बाद वह सिलसिल नाम के स्थान पर पहुंचा। वहां नील नदी एक संकरी घाटी में होकर बहती है और उसके तट पर पर्वतश्रेणी की दुहरी मेंड़सी बनी हुई है। इसी स्थान पर मिस्त्रनिवासी अपने पिशाचपूजा के दिनों में मूर्तियां अंकित करते थे। पापनाशी को एक बृहदाकार 'स्फिक्स'\* ठोस पत्थर का बना हुआ दिखाई दिया। इस भय से कि इस परतिमा में अब भी पैशाचिक विभूतियां संचित न हों, पापनाशी ने सलीब का चिह्न बनाया और परभु मसीह का स्मरण किया। तत्क्षण उसने परतिमा के एक कान में से एक चमगादड़ को उड़कर भागते देखा। पापनाशी को विश्वास हो गया कि मैंने उस पिशाच को भगा दिया जो शताब्दियों से इन परतिमा में अड्डा जमाये हुए था। उसका धमोत्साह ब्रा, उसने एक पत्थर उठाकर परतिमा के मुख पर मारा। चोट लगते ही परतिमा का मुख इतना उदास हो गया कि पापनाशी को उस पर दया आ गयी। उसने उसे सम्बोधित करके कहा-हे परेत, तू भी उन परेतों की भांति परभु पर ईमान ला जिन्हें परातःस्मरणीय एण्टोनी ने वन में देखा था, और मैं ईश्वर, उसके पुत्र और अलख ज्योति के नाम पर तेरे उद्धार करूंगा।

यह वाक्य समाप्त होते ही सिंफक्स के नेत्रों में अग्निज्योति परस्फुटित हुई, उसकी पलकें कांपने लगीं और उसके ष्पाणमुख से 'मसीह' की ध्वनि निकली; माना पापनाशी के शब्द परतिध्वनित हो गये हों। अतएव पापनाशी ने दाहिना हाथ उठाकर उस मूर्ति को आशीर्वाद दिया।

इस परकार ष्पाणहृदय में भक्ति का बीज आरोपित करके पापनाशी ने अपनी राह ली। थोड़ी देर के बाद घाटी चौड़ी हो गयी। वहां किसी बड़े नगर के अवशिष्ट चिह्न दिखाई दिये। बचे हुए मन्दिर जिन खम्भों पर अवलम्बित थे,

वास्तव के उन बड़ीबड़ी ष्पाण मूर्तियों ने ईश्वरीय पररेणा से पापनाशी पर एक लम्बी निगाह डाली। वह भय से कांप उठा। इस परकार वह सत्रह दिन तक चलता रहा, क्षुधा से व्याकुल होता तो वनस्पतियां उखाड़कर खा लेता और रात को किसी भवन के खंडहर में, जंगली बिल्लियों और चूहों के बीच में सो रहता। रात को ऐसी स्त्रियां भी दिखायी देती थीं जिनके पैरों की जगह कांटेदार पूंछ थी। पापनाशी को मालूम था कि यह नारकीय स्त्रियां हैं और वह सलीब के चिह्न बनाकर उन्हें भगा देता था।

अठारहवें दिन पापनाशी को बस्ती से बहुत दूर एक दरिद्र झोंपड़ी दिखाई दी। वह खजूर के पत्तियों की थी और उसका आधा भाग बालू के नीचे दबा हुआ था। उसे आशा हुई कि इनमें अवश्य कोई सन्त रहता होगा। उसने निकट आकर एक बिल के रास्ते अन्दर झांका (उसमें द्वार न थे) तो एक घड़ा, प्याज का एक गड्ढा और सूखी पत्तियों का बिछावन दिखाई दिया। उसने विचार किया, यह अवश्य किसी तपस्वी की कुटिया है, और उनके शीघर ही दर्शन होंगे हम दोनों एकदूसरे के परति शुभकामनासूचक पवित्र शब्दों का उच्चारण करेंगे। कदाचित ईश्वर अपने किसी कौए द्वारा रोटी का एक टुकड़ा हमारे पास भेज देगा और हम दोनों मिलकर भोजन करेंगे।

मन में यह बातें सोचता हुआ उसने सन्त को खोजने के लिए कुटिया की परिक्रमा की। एक सौ पग भी न चला होगा कि उसे नदी के तट पर एक मनुष्य पाल्थी मारे बैठा दिखाई दिया। वह नग्न था। उसके सिर और दांती के बाल सन हो गये थे और शरीर ईंट से भी ज्यादा लाल था। पापनाशी ने साधुओं के परचलित शब्दों में उसका अभिवादन किया- 'बन्धु, भगवान तुम्हें शान्ति दे, तुम एक दिन स्वर्ग के आनन्दलाभ करो।'

पर उस वृद्ध पुरुष ने इसका कुछ उत्तर न दिया, अचल बैठा रहा। उसने मानो कुछ सुना ही नहीं। पापनाशी ने समझा कि वह ध्यान में मग्न है। वह हाथ बांधकर उकड़ूं बैठ गया और सूयास्त तक ईशपरार्थना करता रहा। जब अब भी वह वृद्ध पुरुष मूर्तिवत बैठा रहा तो उसने कहा- 'पूज्य पिता, अगर आपकी समाधि टूट गयी है तो मुझे परभु मसीह के नाम पर आशीर्वाद दीजिए।'

वृद्ध पुरुष ने उसकी ओर बिना ताके ही उत्तर दिया-

'पथिक, मैं तुम्हारी बात नहीं समझा और न परभु मसीह को ही जानता हूं।'

पापनाशी ने विस्मित होकर कहा- 'अरे जिसके परति ऋषियों ने भविष्यवाणी की, जिसके नाम पर लाखों आत्माएं बलिदान हो गयीं, जिसकी सीजर ने भी पूजा की, और जिसका जयघोष सिलसिली की परतिमा ने अभीअभी किया है, क्या उस परभु मसीह के नाम से भी तुम परिचित नहीं हो ? क्या यह सम्भव है ?'

वृद्ध- 'हां मित्रवर, यह सम्भव है, और यदि संसार में कोई वस्तु निश्चित होती तो निश्चित भी होता !'

पापनाशी उस पुरुष की अज्ञानावस्था पर बहुत विस्मित और दुखी हुआ। बोला- 'यदि तुम परभु मसीह को नहीं जानते तो तुम्हारा धर्मकर्म सब व्यर्थ है, तुम कभी अनन्तपद नहीं पराप्त कर सकते।'

वृद्ध- 'कर्म करना, या कर्म से हटना दोनों ही व्यर्थ हैं। हमारे जीवन और मरण में कोई भेद नहीं।'

पापनाशी- 'क्या, क्या? क्या तुम अनन्त जीवन के आकांक्षी नहीं हो ? लेकिन तुम तो तपस्वियों की भांति वन्यकुटी में रहते हो ?'

'हां, ऐसा जान पड़ता है।'



'क्या मैं तुम्हें नग्न और विरत नहीं देखता ?'

'हां, ऐसा जान पड़ता है।'

'क्या तुम कन्दमूल नहीं खाते और इच्छाओं का दमन नहीं करते ?'

'हां, ऐसा जान पड़ता है।'

'क्या तुमने संसार के मायामोह को नहीं त्याग दिया है ?'

'हां, ऐसा जान पड़ता है। मैंने उन मिथ्या वस्तुओं को त्याग दिया है, जिन पर संसार के पराणी जान देते हैं।'

'तुम मेरी भांति एकान्तसेवी, त्यागी और शुद्धाचरण हो। किन्तु मेरी भांति ईश्वर की भक्ति और अनन्त सुख की अभिलाषा से यह वरत नहीं धारण किया है। अगर तुम्हें परभु मसीह पर विश्वास नहीं है तो तुम क्यों सात्विक बने हुए हो ? अगर तुम्हें स्वर्ग के अनन्त सुख की अभिलाषा नहीं है तो संसार के पदार्थों को क्यों नहीं भोगते ?'

बुद्ध पुरुष ने गम्भीर भाव से जवाब दिया- 'मित्र, मैंने संसार की उत्तम वस्तुओं का त्याग नहीं किया है और मुझे इसका गर्व है कि मैंने जो जीवनपथ ग्रहण किया है वह सामान्त्यः सन्तोषजनक है, यद्यपि यथार्थ तो यह है कि संसार की उत्तम या निकृष्ट, भले या बुरे जीवन का भेद ही मिथ्या है। कोई वस्तु स्वतः भली या बुरी, सत्य या असत्य, हानिकर या लाभकर, सुखमय या दुःखमय नहीं होती। हमारा विचार ही वस्तुओं को इन गुणों में आभूषित करता है, उसी भांति जैसे नमक भोजन को स्वाद परदान करता है।'

पापनाशी ने अपवाद किया- 'तो तुम्हारे मतानुसार संसार में कोई वस्तु स्थायी नहीं है ? तुम उस थके हुए कुत्ते की भांति हो, जो कीचड़ में पड़ा सो रहा है-अज्ञान के अन्धकार में अपना जीवन नष्ट कर रहे हो। तुम परतिमावादियों से भी गयेगुजरे हो।'

'मित्र, कुत्तों और ऋषियों का अपमान करना समान ही व्यर्थ है। कुत्ते क्या हैं, हम यह नहीं जानते। हमको किसी वस्तु का लेशमात्र भी ज्ञान नहीं।'

'तो क्या तुम भ्रान्तिवादियों में हो ? क्या तुम उस निबुद्धि, कर्महीन सम्प्रदाय में हो, जो सूर्य के परकाश में और रात्रि के अन्धकार में कोई भेद नहीं कर सकते ?'

'हां मित्र, मैं वास्तव में भ्रमवादी हूं। मुझे इस सम्प्रदाय में शान्ति मिलती है, चाहे तुम्हें हास्यास्पद जान पड़ता हो। क्योंकि एक ही वस्तु भिन्नभिन्न अवस्थाओं में भिन्नभिन्न रूप धारण कर लेती है। इस विशाल मीनारों की को देखो। परभात के पतीपरकाश में यह केशर के कंगूरोंसे देख पड़ते हैं। सन्ध्या समय सूर्य की ज्योति दूसरी ओर पड़ती है और कालेकाले त्रिभुजों के सदृश दिखाई देते हैं। यथार्थ में किस रंग के हैं, इसका निश्चय कौन करेगा ? बादलों की को देखो। वह कभी अपनी दमक से कुन्दन को जलाते हैं, कभी अपनी कालिमा से अन्धकार को मात करते हैं। विश्व के सिवाय और कौन ऐसा निपुण है जो उनके विविध आवरणों की छाया उतार सके ? कौन कह सकता है कि वास्तव में इस मेघसमूह का क्या रंग है ? सूर्य मुझे ज्योतिर्मय दीखता है, किन्तु मैं उसके तत्त्व को नहीं जानता। मैं आग को जलते हुए देखता हूं, पर नहीं जानता कि कैसे जलती है और क्यों जलती है ? मित्रवर, तुम व्यर्थ मेरी उपेक्षा करते हो। लेकिन मुझे इसकी भी चिन्ता नहीं कि कोई मुझे क्या समझता है, मेरा मान करता है या निन्दा।'

पापनाशी ने फिर शंका की- 'अच्छा एक बात और बता दो। तुम इस निर्जन वन में प्याज और छुहारे खाकर जीवन

व्यतीत करते हो ? तुम इतना कष्ट क्यों भोगते हो। तुम्हारे ही समान मैं भी इन्द्रियों का दमन करता हूँ और एकान्त में रहता हूँ। लेकिन मैं यह सब कुछ ईश्वर को परसन्न करने के लिए, स्वर्गीय आनन्द भोगने के लिए करता हूँ। यह एक मार्जनीय उद्देश्य है, परलोकसुख के लिए ही इस लोक में कष्ट उठाना बुद्धिसंगत है। इसके परतिकूल व्यर्थ बिना किसी उद्देश्य के संयम और व्रत का पालन करना, तपस्या से शरीर और रक्त तो घुलाना निरी मूर्खता है। अगर मुझे विश्वास न होता-हे अनादि ज्योति, इस दुर्वचन के लिए क्षमा कर-अगर मुझे उस सत्य पर विश्वास है, जिसका ईश्वर ने ऋषियों द्वारा उपदेश किया है, जिसका उसके परमपिरय पुत्र ने स्वयं आचरण किया है, जिसकी धर्म सभाओं ने और आत्मसमर्पण करने वाले महान पुरुषों ने साक्षी दी है-अगर मुझे पूर्ण विश्वास न होता कि आत्मा की मुक्ति के लिए शारीरिक संयम और निग्रह परमावश्यक है; यदि मैं भी तुम्हारी ही तरह अज्ञेय विषयों से अनभिज्ञ होता, तो मैं तुरन्त सांसारिक मनुष्यों में आकर मिल जाता, धनोपार्जन करता, संसार के सुखी पुरुषों की भांति सुखभोग करता और विलासदेवी के पुजारियों से कहता-आओ मेरे मित्रो, मद के प्याले भरभर पिलाओ, फूलों के सेज बिछाओ, इत्र और फुलेल की नदियां बहा दो। लेकिन तुम कितने बड़े मूर्ख हो कि व्यर्थ ही इन सुखों को त्याग रहे हो, तुम बिना किसी लाभ की आशा के यह सब कष्ट उठाते हो। देते हो, मगर पाने की आशा नहीं रखते। और नकल करते हो हम तपस्वियों की, जैसे अबोध बन्दर दीवार पर रंग पोतकर अपने मन में समझता है कि मैं चित्रकार हो गया। इसका तुम्हारे पास क्या जवाब है ?'

वृद्ध ने सहिष्णुता से उत्तर दिया-'मित्र, कीचड़ में सोने वाले कुत्ते और अबोध बन्दर का जवाब ही क्या ?'

पापनाशी का उद्देश्य केवल इस वृद्ध पुरुष को ईश्वर का भक्त बनाना था। उसकी शान्तिवृत्ति पर वह लज्जित हो गया। उसका क्रोध उड़ गया। बड़ी नमरता से क्षमापरार्थना की-'मित्रवर, अगर मेरा धर्मोत्साह औचित्य की सीमा से बाहर हो गया है तो मुझे क्षमा करो। ईश्वर साक्षी है कि मुझे तुमसे नहीं, केवल तुम्हारी भरान्ति से घृणा है ! तुमको इस अन्धकार में देखकर मुझे हार्दिक वेदना होती है, और तुम्हारे उद्धार की चिन्ता मेरे रोमरोम में व्याप्त हो रही है। तुम मेरे परशनों का उत्तर दो, मैं तुम्हारी उक्तियों का खण्डन करने के लिए उत्सुक हूँ।'

वृद्ध पुरुष ने शान्तिपूर्वक कहा-'मेरे लिए बोलना या चुप रहना एक ही बात है। तुम पूछते हो, इसलिए सुनो-जिन कारणों से मैंने वह सात्विक जीवन ग्रहण किया है। लेकिन मैं तुमसे इनका परतिवाद नहीं सुनना चाहता। मुझे तुम्हारी वेदना, शान्ति की कोई परवाह नहीं, और न इसकी परवाह है कि तुम मुझे क्या समझते हो। मुझे न परेम है न घृणा। बुद्धिमान पुरुष को किसी के परति ममत्व या द्वेष न होना चाहिए। लेकिन तुमने जिज्ञासा की है, उत्तर देना मेरा कर्तव्य है। सुनो, मेरा नाम टिमाक्लीज है। मेरे मातापिता धनी सौदागर थे। हमारे यहां नौकाओं का व्यापार होता था। मेरा पिता सिकन्दर के समान चतुर और कार्यकुशल था; पर वह उतना लोभी न था। मेरे दो भाई थे। वह भी जहाजों की व्यापार करते थे। मुझे विद्या का व्यसन था। मेरे बड़े भाई को पिताजी ने एक धनवान युवती से विवाह करने पर बाध्य किया, लेकिन मेरे भाई शीघ्र ही उससे असन्तुष्ट हो गये। उनका चित्त अस्थिर हो गया। इसी बीच मैं मेरे छोटे भाई का उस स्त्री से कुलषित सम्बन्ध हो गया। लेकिन वह स्त्री दोनों भाइयों में किसी को भी न चाहती थी। उसे एक गवैये से परेम था। एक दिन भेद खुल गया। दोनों भाइयों ने गवैये का वध कर डाला। मेरी भावज शोक से अव्यवस्थितचित्त हो गयी। यह तीनों अभागे पराणी बुद्धि को वासनाओं की बलिदेवी पर चाकर शहर की गलियों में फिरने लगे। नंगे, सिर के बाल ब्राये, मुंह से फिचकुर बहाते, कुत्ते की भांति चिल्लाते रहते थे। लड़के उन पर पत्थर फेंकते और उन पर कुत्ते दौड़ाते। अन्त में तीनों मर गये और मेरे पिता ने अपने ही हाथों से उन तीनों को कबर में

सुलाया। पिताजी को भी इतना शोक हुआ कि उनका दानापानी छूट गया और वह अपरिमित धन रहते हुए भी भूख से तड़पतड़पकर परलोक सिधारे। मैं एक विपुलसम्पत्ति का वारिस हो गया। लेकिन घर वालों की दशा देखकर मेरा चित्त संसार से विरक्त हो गया था। मैंने उस सम्पत्ति को देशाटन में व्यय करने का निश्चय किया। इटली, यूनान, अफ्रीका आदि देशों की यात्रा की; पर एक पराणी भी ऐसा न मिला जो सुखी या ज्ञानी हो। मैंने इस्कन्द्रिया और एथेन्स में दर्शन का अध्ययन किया और उसके अपवादों को सुनते मेरे कान बहरे हो गये। निदान देशविदेश घूमता हुआ मैं भारतवर्ष में जा पहुंचा और वहां गंगातट पर मुझे एक नग्न पुरुष के दर्शन हुए जो वहीं तीस वर्षों से मूर्ति की भांति निश्चल पद्मासन लगाये बैठा हुआ था। उसके तृणवत शरीर पर लताएं चढ़ गयी थीं और उसकी जटाओं में चिड़ियों ने घोंसले बना लिये थे, फिर भी वह जीवित था। उसे देखकर मुझे अपने दोनों भाइयों की, भावज की, गवैये की, पिता की याद आयी और तब मुझे ज्ञात हुआ कि यही एक ज्ञानी पुरुष है। मेरे मन में विचार उठा कि मनुष्यों के दुःख के तीन कारण होते हैं। या तो वह वस्तु नहीं मिलती जिसकी उन्हें अभिलाषा होती है अथवा उसे पाकर उन्हें उसके हाथ से निकल जाने का भय होता है अथवा जिस चीज को वह बुरा समझते हैं उसका उन्हें सहन करना पड़ता है। इन विचारों को चित्त से निकाल दो और सारे दुःख आपही-आप शांत हो जाएंगे। संसार के श्रेष्ठ पदार्थों का परित्याग कर दूंगा और उसी भारतीय योगी की भांति मौन और निश्चल रहूंगा।'

पापनाशी ने इस कथन को ध्यान से सुना और तब बोला-'टिमो, मैं स्वीकार करता हूं कि तुम्हारा कथन बिल्कुल अर्थशून्य नहीं है। संसार की धनसम्पत्ति को तुच्छ समझना बुद्धिमानों का काम है। लेकिन अपने अनन्त सुख की उपेक्षा करना परले सिरे की नादानी है। इससे ईश्वर के क्रोध की आशंका है। मुझे तुम्हारे अज्ञान पर बड़ा दुःख है और मैं सत्य का उपदेश करूंगा जिसमें तुमको उसके अस्तित्व का विश्वास हो जाए और तुम आज्ञाकारी बालक के समान उसकी आज्ञा पालन करो।'

टिमाक्लीज ने बात काटकर कहा-'नहीं नहीं, मेरे सिर अपने धर्मसिद्धान्तों का बोझ मत लादो। इस भूल में न पड़ो कि तुम मुझे अपने विचारों के अनुकूल बना सकोगे। यह तर्कवितर्क सब मिथ्या है। कोई मत न रखना ही मेरा मत है। किसी सम्प्रदाय में न होना ही मेरा सम्प्रदाय है। मुझे कोई दुःख नहीं, इसलि कि मुझे किसी वस्तु की ममता नहीं। अपनी राह जाओ, और मुझे इस उदासीनावस्था से निकालने की चेष्टा न करो। मैंने बहुत कष्ट झेले हैं और यह दशा ठण्डे जल से स्नान करने की भांति सुखकर परतीत हो रही है।'

पापनाशी को मानव चरित्र का पूरा ज्ञान था। वह समझ गया कि इस मनुष्य पर ईश्वर की कृपादृष्टि नहीं हुई है और उसकी आत्मा के उद्धार का समय अभी दूर है। उसने टिमाक्लीज का खण्डन न किया कि कहीं उसकी उद्धारकशक्ति घातक न बन जाए क्योंकि विधर्मियों से शास्त्रार्थ करने में कभीकभी ऐसा हो जाता है कि उनके उद्धार के साधन उनके अपकार के यन्त्र बन जाते हैं। अतएव जिन्हें सद्ज्ञान पराप्त है। उन्हें बड़ी चतुराई से उसका परचार करना चाहिए। उसने टिमाक्लीज को नमस्कार किया और एक लम्बी सांस खींचकर रात ही को फिर यात्रा पर चल पड़ा।

सूयोर्दय हुआ तो उसने जलपक्षियों को नदी के किनारे एक पैर पर खड़े देखा। उनकी पीली और गुलाबी गर्दनों को परतिबिम्ब जल में दिखाई देता था। कोमल बेत वृक्ष अपनी हरीहरी पत्तियों को जल पर फैलाए हुए थे। स्वच्छ आकाश में सारसों का समूह त्रिभुज के आकर में उड़ रहा था और झाड़ियों में छिपे हुए बुगलों की आवाज सुनाई देती थी। जहां तक निगाह जाती थी नदी का हरा जल हिलकोरे मार रहा था। उजले पाल वाली नौकाएं चिड़ियों की भांति तैर रही थीं, और किनारों पर जहांतहां श्वेत भवन जगमगा रहे थे। तटों पर हल्का कुहरा छाया हुआ था और द्वीपों के

आड़ से जो, खजूर, फूल और फल के वृक्षों से के हुए थे; ये बत्तख, लालसर, हारिल आदि ये चिड़ियां कलख करती हुई निकल रही थी। बाईं ओर मरुस्थल तक हरेभरे खेतों और वृक्षपुंजों की शोभा आंखों को मुग्ध कर देती थी। पके हुए गेहूं के खेतों पर सूर्य की किरणें चमक रही थीं और भूमि से भीनीभीनी सुगन्ध के झोके आते थे। यह परकृतिशोभा देखकर पापनाशी ने घुटनों पर गिरकर ईश्वर की वन्दना की-'भगवान्, मेरी यात्रा समाप्त हुई। तुझे धन्यवाद देता हूं। दयानिधि, जिस परकार तूने इन अंजीर के पौधों पर ओस की बूंदों की वर्षा की है, उसी परकार थायस पर, जिसे तूने अपने परम से रचा है, अपनी दया की दृष्टि कर। मेरी हार्दिक इच्छा है कि वह तेरी परममयी रक्षा के अधीन एक नवविकसित पुष्प की भांति स्वर्गतुल्य जेरुशलम में अपने यश और कीर्ति का परसार करे।' और तदुपरान्त उसे जब कोई वृक्ष फूलों से सुशोभित अथवा कोई चमकीले परों वाला पक्षी दिखाई देता तो उसे थायस की याद आती। कई दिन तक नदी के बायें किनारे पर, एक उर्वर और आबाद परान्त में चलने के बाद, वह इस्कन्द्रिया नगर में पहुंचा, जिसे यूनानियों ने 'रमणीक' और 'स्वर्णमयी' की उपाधि दे रखी थी। सूर्योदय की एक घड़ी बीत चुकी थी, जब उसे एक पहाड़ी के शिखर पर वह विस्तृत नगर नजर आया, जिसकी छतें कंचनमयी परकाश में चमक रही थीं। वह ठहर गया और मन में विचार करने लगा-'यही वह मनोरम भूमि है जहां मैंने मृत्युलोक में पर्दापण किया, यहीं मेरे पापमय जीवन की उत्पत्ति हुई, यहीं मैंने विषाक्त वायु का आलिंगन किया, इसी विनाशकारी रक्तसागर में मैंने जलविहार किये ! वह मेरा पालना है जिसके घातक गोद में मैंने काम की मधुर लोरियां सुनीं। साधारण बोलचाल में कितना परतिभाशाली स्थान है, कितना गौरव से भरा हुआ। इस्कन्द्रिया ! मेरी विशाल जन्मभूमि ! तेरे बालक तेरा पुत्रवत सम्मान करते हैं, यह स्वाभाविक है। लेकिन योगी परकृति को अवहेलनीय समझता है, साधु बहिरूप को तुच्छ समझता है, परभु मसीह का दास जन्मभूमि को विदेश समझता है, और तपस्वी इस पृथ्वी का पराणी ही नहीं। मैंने अपने हृदय को तेरी ओर से फेर लिया है। मैं तुमसे घृणा करता हूं। मैं तेरी सम्पत्ति को, तेरी विद्या को, तेरे शास्त्रों को, तेरे सुखविलास को, और तेरी शोभा को घृणित समझता हूं, तू पिशाचों का क्रीडास्थल है, तुझे धिक्कार है ! अर्थसेवियों की अपवित्र शय्या नास्तिकता का वितण्डा क्षेत्र, तुझे धिक्कार है ! और जिबरील, तू अपने पैरों से उस अशुद्ध वायु को शुद्ध कर दे जिसमें मैं सांस लेने वाला हूं, जिसमें यहां के विषैले कीटाणु मेरी आत्मा को भ्रष्ट न कर दें।'

इस तरह अपने विचारोद्गारों को शान्त करके पापनाशी शहर में परविष्ट हुआ। यह द्वार पत्थर का एक विशाल मण्डप था। उसके मेहराब की छांह में कई दरिद्र भिक्षु बैठे हुए पथिकों के सामने हाथ फैलाफैलाकर खैरात मांग रहे थे।

एक वृद्धा स्त्री ने जो वहां घुटनों के बल बैठी थी, पापनाशी की चादर पकड़ ली और उसे चूमकर बोली-'ईश्वर के पुत्र, मुझे आशीर्वाद दो कि परमात्मा मुझसे सन्तुष्ट हो। मैंने परलौकिक सुख के निमित्त इस जीवन में अनेक कष्ट झेले। तुम देव पुरुष हो, ईश्वर ने तुम्हें दुःखी पराणियों के कल्याण के लिए भेजा है, अतएव तुम्हारी चरणरज कंचन से भी बहुमूल्य है।'

पापनाशी ने वृद्ध को हाथों से स्पर्श करके आशीर्वाद दिया। लेकिन वह मुश्किल से बीस कदम चला होगा कि लड़कों के एक गोल ने उसको मुंह चिना और उस पर पत्थर फेंकना शुरू किया और तालियां बजाकर कहने लगे-'जरा अपनी विशालमूर्ति देखिए ! आप लंगूर से भी काले हैं, और आपकी दांती बकरे की ढाढ़ी से लम्बी है। बिल्कुल भुतना मालूम होता है। इसे किसी बाग में मारकर लटका दो, कि चिड़ियां हौवा समझकर उड़ें। लेकिन नहीं, बाग में गया तो सेंट में सब फूल नष्ट हो जाएंगे। उसकी सूरत ही मनहूस है। इसका मांस कौओं को खिला दो।' यह कहकर उन्होंने पत्थर की एक बां छोड़ दी।

लेकिन पापनाशी ने केवल इतना कहा-'ईश्वर, तू इस अबोध बालकों को सुबुद्धि दे, वह नहीं जानते कि वे क्या करते हैं।

वह आगे चला तो सोचने लगा-उस वृद्धा स्त्री ने मेरा कितना सम्मान किया और इन लड़कों ने कितना अपमान किया। इस भांति एक ही वस्तु को भ्रम में पड़े हुए पराणी भिन्नभिन्न भावों से देखते हैं। यह स्वीकार करना पड़ेगा कि टिमाकलीज मिथ्यावादी होते हुए भी बिल्कुल निबुद्धि न था। वह अंधा तो इतना जानता था कि मैं परकाश से वंचित हूं। उसका वचन इन दुरागरहियों से कहीं उत्तम था जो घने अंधकार में बैठे पुकारते हैं-'वह सूर्य है !' वह नहीं जानते कि संसार में सब कुछ माया, मृगतृष्णा, उड़ता हुआ बालू है। केवल ईश्वर ही स्थायी है।

वह नगर में बड़े वेग से पांव उठाता हुआ चला। दस वर्ष के बाद देखने पर भी उसे वहां का एकएक पत्थर परिचित मालूम होता था, और परत्येक पत्थर उसके मन में किसी दुष्कर्म की याद दिलाता था। इसलिए उसने सड़कों से जड़े हुए पत्थरों पर अपने पैरों को पटकना शुरू किया और जब पैरों से रक्त बहने लगा तो उसे आनन्दसा हुआ। सड़क के दोनों किनारों पर बड़ेबड़े महल बने हुए थे जो सुगन्ध की लपटों से अलसित जान पड़ते थे। देवदार, छुहारे आदि के वृक्ष सिर उठाये हुए इन भवनों को मानो बालाकों की भांति गोद में खिला रहे थे। अधखुले द्वारों में से पीतल की मूर्तियां संगरममर के गमलों में रखी हुई दिखाई दे रही थीं और स्वच्छ जल के हौज कुंजों की छाया में लहरें मार रहे थे। पूर्ण शान्ति छाई थी। शोरगुल का नाम न था। हां, कभीकभी द्वार से आने वाली वीणा की ध्वनि कान में आ जाती थी। पापनाशी एक भवन के द्वार पर रुका जिसकी सायबान के स्तम्भ युवतियों की भांति सुन्दर थे। दीवारों पर यूनान के सर्वश्रेष्ठ ऋषियों की परतिमाएं शोभा दे रही थीं। पापनाशी ने अफलातूं, सुकरात अरस्तू, एपिक्युरस और जिनों की परतिमाएं पहचानीं और मन में कहा-इन मिथ्याभ्रम में पड़ने वाले मनुष्यों को कीर्तियों को मूर्तियों को मूर्तिमान करना मूर्खता है। अब उनके मिथ्या विचारों की कलई खुल गयी। उनकी आत्मा अब नरक में पड़ी सड़ रही है, और यहां तक कि अफलातूं भी, जिसने संसार को अपनी परगल्भता से गुंजरित कर दिया था, अब पिशाचों के साथ तूतू मैंमें कर रहा है। द्वार पर एक हथौड़ी रखी हुई थी। पापनाशी ने द्वार खटखटाया। एक गुलाम ने तुरन्त द्वार खोल दिया और एक साधु को द्वार पर खड़े देखकर कर्कश स्वर में बोला-'दूर हो यहां से, दूसरा द्वार देख, नहीं तो मैं डंडे से खबर लूंगा।'

पापनाशी ने सरल भाव से कहा-'मैं कुछ भिक्षा मांगने नहीं आया हूं। मेरी केवल यही इच्छा है कि मुझे अपने स्वामी निसियास के पास ले चलो।'

गुलाम ने और भी बिगड़कर जवाब दिया-'मेरा स्वामी तुमजैसे कुत्तों से मुलाकात नहीं करता !'

पापनाशी-'पुत्र, जो मैं कहता हूं वह करो, अपने स्वामी से इतना ही कह दो कि मैं उससे मिलना चाहता हूं।'

दरबान ने क्रोध के आवेश में आकर कहा-'चला जा यहां से, भिखमंगा कहीं का !' और अपनी छड़ी उठाकर उसने पापनाशी के मुंह पर जोर से लगाई। लेकिन योगी ने छाती पर हाथ बांधे, बिना जरा भी उत्तेजित हुए, शांत भाव से यह चोट सह ली और तब विनयपूर्वक फिर वही बात कही-'पुत्र, मेरी याचना स्वीकार करो।'

दरबान ने चकित होकर मन में कहा-यह तो विचित्र आदमी है जो मार से भी नहीं डरता और तुरन्त अपने स्वामी से पापनाशी का संदेशा कह सुनाया।

निसियास अभी स्नानागार से निकला था। दो युवतियां उसकी देह पर तेल की मालिश कर रही थीं। वह रूपवान

पुरुष था, बहुत ही परसन्नचित्त। उसके मुख पर कोमल व्यंग की आभा थी। योगी को देखते ही वह उठ खड़ा हुआ और हाथ फैलाये हुए उसकी ओर ब्रा-आओ मेरे मित्र, मेरे बन्धु, मेरे सहपाठी, आओ। मैं तुम्हें पहचान गया, यद्यपि तुम्हारी सूरत इस समय आदमियों कीसी नहीं, पशुओं कीसी है। आओ, मेरे गले से लग जाओ। तुम्हें वह दिन याद है जब हम व्याकरण, अलंकार और दर्शन शास्त्र पढ़ते थे ? तुम उस समय भी तीवर और उद्वण्ड परकृति के मनुष्य थे, पर पूर्ण सत्यवादी तुम्हारी तृप्ति एक चुटकी भर नमक में हो जाती थी पर तुम्हारी दानशीलता का वारापार न था। तुम अपने जीवन की भांति अपने धन की भी कुछ परवाह न करते थे। तुममें उस समय भी थोड़ीसी झक थी जो बुद्धि की कुशलता का लक्षण है। तुम्हारे चरित्र की विचित्रता मुझे बहुत भली मालूम होती थी। आज तुमने उस वर्षों के बाद दर्शन दिये हैं। हृदय से मैं तुम्हारा स्वागत करता हूं। तुमने वन्यजीवन को त्याग दिया और ईसाइयों की दुर्मति को तिलांजलि देकर फिर अपने सनातन धर्म पर आरु हो गये, इसके लिए तुम्हें बधाई देता हूं। मैं सफेद पत्थर पर इस दिन का स्मारक बनाऊंगा।

यह कहकर उसने उन दोनों युवती सुन्दरियों को आदेश दिया-‘मेरे प्यारे मेहमान से हाथोंपैरों और दाँतों में सुगन्ध लगाओ।’

युवतियां हंसीं और तुरन्त एक थाल, सुगन्ध की शीशी और आईना लायीं। लेकिन पापनाशी ने कठोर स्वर से उन्हें मना किया और आंखें नीची कर लीं कि उन पर निगाह न पड़ जाए क्योंकि दोनों नग्न थीं। निसियास ने तब उसके लिए गावत किये और बिस्तर मंगाये और नाना परकार के भोजन और उत्तम शराब उसके सामने रखी। पर उसने घृणा के साथ सब वस्तुओं को सामने से हटा दिया। तब बोला-‘निसियास, मैंने उस सत्पथ का परित्याग नहीं किया जिसे तुमने गलती से ‘ईसाइयों की दुर्मति’ कहा है। वही तो सत्य की आत्मा और ज्ञान का पराण है। आदि में केवल ‘शब्द’ था और ‘शब्द’ के साथ ईश्वर था, और शब्द ही ईश्वर था। उसी ने समस्त ब्रह्माण्ड की रचना की। वही जीवन का स्रोत है और जीवन मानवजाति का परकाश है।’

निसियास ने उत्तर दिया-‘पिरय पापनाशी, क्या तुम्हें आशा है कि मैं अर्थहीन शब्दों के झंकार से चकित हो जाऊंगा ? क्या तुम भूल गये कि मैं स्वयं छोटामोटा दार्शनिक हूँ? क्या तुम समझते हो कि मेरी शांति उन चिथड़ों से हो जाएगी जो कुछ निबुद्धि मनुष्यों ने इमलियस के वस्त्रों से फाड़ लिया है, जब इसलियस, फलातूँ, और अन्य तत्त्वज्ञानियों से मेरी शांति न हुई ? ऋषियों के निकाले हुए सिद्धान्त केवल कल्पित कथाएं हैं जो मानव सरलहृदयता के मनोरंजन के निमित्त कही गयी हैं। उनको पृकर हमारा मनोरंजन उसी भांति होता है जैसे अन्य कथाओं को पृकर।’

इसके बाद अपने मेहमान का हाथ पकड़कर वह उसे एक कमरे में ले गया जहां हजारों लपेटे हुए भोजपत्र टोकरो में रखे हुए थे। उन्हें दिखाकर बोला-‘यही मेरा पुस्तकालय है। इसमें उन सिद्धान्तों में से कितनी ही का संग्रह है जो ज्ञानियों ने सृष्टि के रहस्य की व्याख्या करने के लिए आविष्कृत किये हैं। सेरापियम\* में भी अतुल धन के होते हुए; सब सिद्धान्तों का संग्रह नहीं है ! लेकिन शोक ! यह सब केवल रोगपीडित मनुष्यों के स्वप्न हैं !’

उसने तब अपने मेहमान को एक हाथीदांत की कुरसी पर जबरदस्ती बैठाया और खुद भी बैठ गया। पापनाशी ने इन पुस्तकों को देखकर तयोरियां चायीं और बोला-‘इन सबको अग्नि की भेंट कर देना चाहिए।’

निसियास बोला-‘नहीं पिरय मित्र, यह घोर अनर्थ होगा; क्योंकि रुग्ण पुरुषों को मिटा दें तो संसार शुष्क और नीरस हो जाएगा और हम सब विचारशैथिल्य के गे में जा पड़ेंगे।’

पापनाशी ने उसी ध्वनि में कहा-‘यह सत्य है कि मूर्तिवादियों के सिद्धान्त मिथ्या और भ्रान्तिकारक हैं। किन्तु ईश्वर ने, जो सत्य का रूप है, मानवशरीर धारण किया और अलौकिक विभूतियों द्वारा अपने को परकट किया और हमारे साथ रहकर हमारा कल्याण करता रहा।’

निसियास ने उत्तर दिया-‘पिय पापनाशी, तुमने यह बात अच्छी कही कि ईश्वर ने मानवशरीर धारण किया। तब तो वह मनुष्य ही हो गया। लेकिन तुम ईश्वर और उसके रूपान्तरों का समर्थन करने तो नहीं आये ? बतलाओ तुम्हें मेरी सहायता तो न चाहिए ? मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूँ ?’

पापनाशी बोला-‘बहुत कुछ ! मुझे ऐसा ही सुगन्धित एक वस्त्र दे दो जैसा तुम पहने हुए हो। इसके साथ सुनहरे खड़ाऊँ और एक प्याला तेल भी दे दो कि मैं अपनी दाँती और बालों में चुपड़ लूँ। मुझे एक हजार स्वर्ण मुद्राओं की एक थैली भी चाहिए निसियास ! मैं ईश्वर के नाम पर और पुरानी मित्रता के नाते तुमसे सहायता मांगने आया हूँ।’

निसियास ने अपना सर्वोत्तम वस्त्र मंगवा दिया। उस पर किमख्वाब के बूटों में फूलों और पशुओं के चित्र बने हुए थे। दोनों युवतियों ने उसे खोलकर उसका भड़कीला रंग दिखाया और परतीक्षा करने लगी कि पापनाशी अपना ऊनी लबादा उतारे तो पहनायें, लेकिन पापनाशी ने जोर देकर कहा कि यह कदापि नहीं हो सकता। मेरी खाल चाहे उतर जाए पर यह ऊनी लबादा नहीं उतर सकता। विवश होकर उन्होंने उस बहुमूल्य वस्त्र को लबादे के ऊपर ही पहना दिया। दोनों युवतियाँ सुन्दरी थीं, और वह पुरुषों से शरमाती न थीं। वह पापनाशी को इस दुरंगे भेष में देखकर खूब हंसी। एक ने उसे अपना प्यारा सामन्त कहा, दूसरी ने उसकी दाँती खींच ली। लेकिन पापनाशी ने उन दृष्टिपात तक न किया। सुनहरी खड़ाऊँ पैरों में पहनकर और थैली कमरे में बांधकर उसने निसियास से कहा, जो विनोदभाव से उसकी ओर देख रहा था-निसियास, इन वस्तुओं के विषय में कुछ सन्देह मत करना, क्योंकि मैं इनका सदुपयोग करूँगा।

निसियास बोला-‘पिय मित्र, मुझे कोई सन्देह नहीं है क्योंकि मेरा विश्वास है कि मनुष्य में न भले काम करने की क्षमता है न बुरे। भलाई व बुराई का आधार केवल परथा पर है। मैं उन सब कुत्सित व्यवहारों का पालन करता हूँ जो इस नगर में परचलित हैं। इसलिए मेरी गणना सज्जन पुरुषों में है। अच्छा मित्र, अब जाओ और चैन करो।’

लेकिन पापनाशी ने उससे अपना उद्देश्य परकट करना अवश्यक समझा। बोला-‘तुम थायस को जानते हो जो यहां की रंगशालाओं का शृंगार है ?’ निसियास ने कहा-‘वह परम सुन्दरी है और किसी समय मैं उसके परेमियों में था। उसकी खातिर मैंने एक कारखाना और दो अनाज के खेत बेच डाले और उसके विरहवर्णन में निकृष्ट कविताओं से भरे हुए तीन गरन्थ लिख डाले। यह निर्विवाद है कि रूपलालित्य संसार की सबसे परबल शक्ति है, और यदि हमारे शरीर की रचना ऐसी होती कि हम यावज्जीवन उस पर अधिकृत रह सकते तो हम दार्शनिकों के जीवन और भ्रम, माया और मोह, पुरुष और परकृति की जरा भी परवाह न करते। लेकिन मित्र, मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि तुम अपनी कुटी छोड़कर केवल थायस की चचार करने के लिए आये हो।’

यह कहकर निसियास ने एक ठंडी सांस खींची। पापनाशी ने उसे भीतर नेत्रों से देखा। उसकी यह कल्पना ही असम्भव मालूम होती थी कि कोई मनुष्य इतनी सावधानी से अपने पापों को परकट कर सकता है। उसे जरा भी आश्चर्य न होता, अगर जमीन फट जाती और उसमें से अग्निज्वाला निकलकर उसे निगल जाती। लेकिन जमीन स्थिर बनी रही, और निसियास हाथ पर मसतक रखे चुपचाप बैठा हुआ अपने पूर्व जीवन की स्मृतियों पर म्लानमुख

से मुस्कराता रहा। योगी तब उठा और गम्भीर स्वर में बोला- 'नहीं निसियास, मैं अपना एकान्तवास छोड़कर इस पिशाच नगरी में थायस की चचार करने नहीं आया हूं। बल्कि, ईश्वर की सहायता से मैं इस रमणी को अपवित्र विलास के बन्धनों से मुक्त कर दूंगा और उसे परभु मसीह की सेवार्थ भेंट करूंगा। अगर निराकार ज्योति ने मेरा साथ न छोड़ा तो थायस अवश्य इस नगर को त्यागकर किसी वनिताधमार्श्रम में परवेश करेगी।'

निसियास ने उत्तर दिया- 'मधुर कलाओं और लालित्य की देवी वीनस को रुष्ट करते हो तो सावधान रहना। उसकी शक्ति अपार है और यदि तुम उसकी परधान उपासिका को ले जाओगे तो वह तुम्हारे ऊपर वजरघात करेगी।'

पापनाशी बोला- 'परभु मसीह मेरी रक्षा करेंगे। मेरी उनसे यह भी परार्थना है कि वह तुम्हारे हृदय में धर्म की ज्योति परकाशित करें और तुम उस अन्धकारमय कूप में से निकल आओ जिसमें पड़े हुए एड़ियां रगड़ रहे हो।'

यह कहकर वह गर्व से मस्तक उठाये बाहर निकला। लेकिन निसियास भी उसके पीछे चला। द्वार पर आतओते उसे पा लिया और तब अपना हाथ उसके कन्धे पर रखकर उसके कान में बोला- 'देखो वीनस को क्रुद्ध मत करना। उसका परत्याघात अत्यन्त भीषण होता है।'

किन्तु पापनाशी ने इस चेतावनी को तुच्छ समझा, सिर फेरकर भी न देखा। वह निसियास को पतित समझता था, लेकिन जिस बात से उसे जलन होती थी वह यह थी कि मेरा पुराना मित्र थायस का परेममात्र रह चुका है। उसे ऐसा अनुभव होता था कि इससे घोर अपराध हो ही नहीं सकता। अब से वह निसियास को संसार का सबसे अधम, सबसे घृणित पराणी समझने लगा। उसने भरष्टाचार से सदैव नफरत की थी, लेकिन आज के पहले यह पाप उसे इतना नारकीय कभी न परतीत हुआ था। उसकी समझ में परभु मसीह के क्रोध और स्वर्ग दूतों के तिरस्कार का इससे निन्द्य और कोई विषय ही न था।

उसके मन में थायस को इन विलासियों से बचाने के लिए और भी तीवर आकांक्षा जागृत हुई। अब बिना एक क्षण विलम्ब किये मुझे थामस से भेंट करनी चाहिए। लेकिन अभी मध्याह्न काल था और जब तक दोपहर की गरमी शान्त न हो जाए, थायस के घर जाना उचित न था। पापनाशी शहर की सड़कों पर घूमता रहा। आज उसने कुछ भोजन न किया था जिसमें उस पर ईश्वर की दया दृष्टि रहे। कभी वह दीनता से आंखें जमीन की ओर झुका लेता था, और कभी अनुरक्त होकर आकाश की ओर ताकने लगता था। कुछ देर इधरउधर निष्परयोजन घूमने के बाद वह बन्दरगाह पर जा पहुंचा। सामने विस्तृत बन्दरगाह था, जिसमें असंख्य जलयान और नौकाएं लंगर डाले पड़ी हुई थीं, और उनके आगे नीला समुद्र, श्वेत चादर ओं हंस रहा था। एक नौका ने, जिसकी पतवार पर एक अप्सरा का चित्र बना हुआ था अभी लंगर खोला था। डांडें पानी में चलने लगे, मांझियों ने गाना आरम्भ किया और देखतेदेखते वह श्वेतवस्त्रधारिणी जलकन्या योगी की दृष्टि में केवल एक स्वप्नचित्र की भांति रह गयी। बन्दरगाह से निकलकर, वह अपने पीछे जगमगाता हुआ जलमार्ग छोड़ती खुले समुद्र में पहुंच गयी।

पापनाशी ने सोचा- मैं भी किसी समय संसारसागर पर गाते हुए यात्रा करने को उत्सुक था लेकिन मुझे शीघ्र ही अपनी भूल मालूम हो गयी। मुझ पर अप्सरा का जादू न चला।

इन्हीं विचारों में मग्न वह रस्सियों की गेंडुली पर बैठ गया। निद्रा से उसकी आंखें बन्द हो गयीं। नींद में उसे एक स्वप्न दिखाई दिया। उसे मालूम हुआ कि कहीं से तुरहियों की आवाज कान में आ रही है, आकाश रक्तवर्ण हो गया है। उसे ज्ञात हुआ कि धमार्धर्म के विचार का दिन आ पहुंचा। वह बड़ी तन्मयता से ईशवन्दना करने लगा। इसी बीच में उसने



एक अत्यन्त भयंकर जंतु को अपनी ओर आते देखा, जिसके माथे पर परकाश का एक सलीव लगा हुआ था। पापनाशी ने उसे पहचान लिया-सिलसिली की पिशाचमूर्ति थी। उस जन्तु ने उसे दांतों के नीचे दबा लिया और उसे लेकर चला, जैसे बिल्ली अपने बच्चे को लेकर चलती है। इस भांति वह जन्तु पापनाशी को कितने ही द्वीपों से होता, नदियों को पार करता, पहाड़ों को फांदता अन्त में एक निर्जन स्थान में पहुंचा, जहां दहकते हुए पहाड़ और झुलसते राख के ़ेरों के सिवाय और कुछ नजर न आता था। भूमि कितने ही स्थलों पर फट गयी थी और उसमें से आग की लपट निकल रही थी। जन्तु ने पापनाशी को धीरे से उतार दिया और कहा-'देखो !'

पापनाशी ने एक खोह के किनारे झुककर नीचे देखा। एक आग की नदी पृथ्वी के अन्तस्थल में दो कालेकाले पर्वतों के बीच से बह रही थी। वहां धुंधले परकाश में नरक के दूत पापात्माओं को कष्ट दे रहे थे। इन आत्माओं पर उनके मृत शरीर का हलका आवरण था, यहां तक कि वह कुछ वस्त्र भी पहने हुए थी। ऐसे दारुण कष्टों में भी यह आत्माएं बहुत दुःखी न जान पड़ती थीं। उनमें से एक जो लम्बी, गौरवर्ण, आंखें बन्द किये हुए थी, हाथ में एक तलवार लिये जा रही थी। उसके मधुर स्वरों से समस्त मरुभूमि गूंज रही थी। वह देवताओं और शूरवीरों की विरुदावली गा रही थी। छोटेछोटे हरे रंग के दैत्य उनके होंठ और कंठ को लाल लोहे की सलाखों से छेद रहे थे। यह अमर कवि होमर की परतिच्छाया थी। वह इतना कष्ट झेलकर भी गाने से बाज न आती थी। उसके समीप ही अनकगोरस, जिसके सिर के बाल गिर गये थे, धूल में परकाल से शक्लें बना रहा था। एक दैत्य उसके कानों में खोलता हुआ तेल डाल रहा था; पर उसकी एकाग्रता को भंग न कर सकता था। इसके अतिरिक्त पापनाशी को और कितनी ही आत्माएं दिखाई दीं जो जलती हुई नदी के किनारे बैठी हुई उसी भांति पठनपाठन, वादपरतिवाद, उपासनाध्यान में मग्न थीं जैसे यूनान के गुरुकुलों में गुरुशिष्य किसी वृक्ष की छाया में बैठकर किया करते थे, वृद्ध टिमाक्लीज ही सबसे अलग था और भरान्तिवादियों की भांति सिर हिला रहा था। एक दैत्य उसकी आंखों के सामने एक मशाल हिला रहा था, किन्तु टिमाक्लीज आंखें ही न खोलता था।

इस दृश्य से चकित होकर पापनाशी ने उस भयंकर जन्तु की ओर देखा जो उसे यहां लाया था। कदाचित उससे पूछना चाहता था कि यह क्या रहस्य है ? पर वह जन्तु अदृश्य हो गया था और उसकी जगह एक स्त्री मुंह पर नकाब डाले खड़ी थी। वह बोली-'योगी, खूब आंखें खोलकर देख ! इन भ्रष्ट आत्माओं का दुरागारह इतना जटिल है कि नरक में भी उनकी भरान्ति शान्त नहीं हुई। यहां भी वह उसी माया के खिलौने बने हुए हैं। मृत्यु ने उनके भरमजाल को नहीं तोड़ा क्योंकि परत्यक्ष ही, केवल मर जाने से ही ईश्वर के दर्शन नहीं होते। जो लोग जीवनभर अज्ञानान्धकार में पड़े हुए थे, वह मरने पर भी मूर्ख ही बने रहेंगे। यह दैत्यगण ईश्वरीय न्याय के यंत्र ही तो हैं। यही कारण है कि आत्माएं उन्हें न देखती हैं न उनसे भयभीत होती हैं। वह सत्य के ज्ञान से शून्य थे, अतएव उन्हें अपने अकर्मों का भी ज्ञान न था। उन्होंने जो कुछ किया अज्ञान की अवस्था में किया। उन पर वह दोषारोपण नहीं कर सकता फिर वह उन्हें दण्ड भोगने पर कैसे मजबूर कर सकता है ?'

पापनाशी ने उत्तेजित होकर कहा-'ईश्वर सर्वशक्तिमान है, वह सब कुछ कर सकता है।

नकाबपोश स्त्री ने उत्तर दिया-'नहीं, वह असत्य को सत्य नहीं कर सकता। उसको दंड भोग के योग्य बनाने के लिए पहले उनको अज्ञान से मुक्त करना होगा, और जब वह अज्ञान से मुक्त हो जाएंगे तो वह धमात्माओं की श्रेणी में आ जाएंगे !'

पापनाशी उद्विग्न और ममार्हत होकर फिर खोह के किनारों पर झुका। उसने निसियास की छाया को एक पुष्पमाला

सिर पर डाले, और एक झुलसे हुए मेंहदी के वृक्ष के नीचे बैठे देखा। उसकी बगल में एक अति रूपवती वेश्या बैठी हुई थी और ऐसा विदित होता था कि वह परेम की व्याख्या कर रहे हैं। वेश्या की मुखश्री मनोहर और अपिरतम थी। उन पर जो अग्नि की वर्षा हो रही थी वह ओस की बूंदों के समान सुखद और शीतल थी, और वह झुलसती हुई भूमि उनके पैरों से कोमल तृण के समान दब जाती थी। यह देखकर पापनाशी की क्रोधाग्नि जोर से भड़क उठी। उसने चिल्लाकर कहा-ईश्वर, इस दुराचारी पर वज्रघात कर ! यह निसियास है। उसे ऐसा कुचल कि वह रोये, कराहे और क्रोध से दांत पीसे। उसने थायस को भरष्ट किया है।

सहसा पापनाशी की आंखें खुल गईं। वह एक बलिष्ठ मांझी की गोद में था। मांझी बोला-‘बस मित्र, शान्त हो जाओ। जल देवता साक्षी है कि तुम नींद में बुरी तरह चौंक पड़ते हो। अगर मैंने तुम्हें सम्हाल न लिया होता तो तुम अब तक पानी में डुबकियां खाते होते। आज मैंने तुम्हारी जान बचाई।’

पापनाशी बोला-‘ईश्वर की दया है।’

वह तुरन्त उठ खड़ा हुआ और इस स्वप्न पर विचार करता हुआ आगे ब्रा। अवश्य ही यह दुस्वप्न है। नरक को मिथ्या समझना ईश्वरीय न्याय का अपमान करना है। इस स्वप्न को परेषक कोई पिशाच है।

ईसाई तपस्वियों के मन में नित्य यह शंका उठती रहती कि इस स्वप्न का हेतु ईश्वर है या पिशाच। पिशाचादि उन्हें नित्य घेरे रहते थे। मनुष्यों से जो मुंह मोड़ता है, उसका गला पिशाचों से नहीं छूट सकता। मरुभूमि पिशाचों का क्रीड़ाक्षेत्र है। वहां नित्य उनका शोर सुनाई देता है। तपस्वियों को परायः अनुभव से, स्वप्न की व्यवस्था से ज्ञान हो जाता है कि यह मर्द ईश्वरीय परेरणा है या पिशाचिक परलोभन। पर कभीकभी बहुत यत्न करने पर भी उन्हें भ्रम हो जाता था। तपस्वियों और पिशाचों में निरन्तर और महाघोर संग्राम होता रहता था। पिशाचों को सदैव यह धुन रहती थी कि योगियों को किसी तरह धोखे में डालें और उनसे अपनी आज्ञा मनवा लें। सन्त जॉन एक परसिद्ध पुरुष थे। पिशाचों के राजा ने साठ वर्ष तक लगातार उन्हें धोखा देने की चेष्टा की, पर सन्त जॉन उसकी चालों को ताड़ लिया करते थे। एक दिन पिशाचराजा ने एक वैरागी का रूप धारण किया और जॉन की कुटी में आकर बोला-‘जॉन, कल शाम तक तुम्हें अनशन (वरत) रखना होगा।’ जॉन ने समझा, वह ईश्वर का दूत है और दो दिन तक निर्जल रहा। पिशाच ने उन पर केवल यही एक विजय पराप्त की, यद्यपि इससे पिशाचराज का कोई कुत्सित उद्देश्य न पूरा हुआ, पर सन्त जॉन को अपनी पराजय का बहुत शोक हुआ। किन्तु पापनाशी ने जो स्वप्न देखा था उसका विषय ही कहे देता था कि इसका कर्ता पिशाच है।

वह ईश्वर से दीन शब्दों में कह रहा था-‘मुझसे ऐसा कौनसा अपराध हुआ जिसके दण्डस्वरूप तूने मुझे पिशाच के फन्दे में डाल दिया।’ सहसा उसे मालूम हुआ कि मैं मनुष्यों के एक बड़े समूह में इधरउधर धक्के खा रहा हूं। कभी इधर जा पड़ता हूं, कभी उधर। उसे नगरों की भीड़भाड़ में चलने का अभ्यास न था। वह एक जड़ वस्तु की भांति इधर उधर ठोकरें खाता फिरता था, और अपने कमख्वाब के कुरते के दामन से उलझकर वह कई बार गिरतेगिरते बचा। अन्त में उसने एक मनुष्य से पूछा-‘तुम लोग सबके-सब एक ही दिशा में इतनी हड़बड़ी के साथ कहां दौड़े जा रहे हो ? क्या किसी सन्त का उपदेश हो रहा है ?’

उस मनुष्य ने उत्तर दिया-‘यात्री, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि शीघर ही तमाशा शुरू होगा और थायस रंगमंच पर उपस्थित होगी। हम सब उसी थियेटर में जा रहे हैं। तुम्हारी इच्छा हो तो तुम भी हमारे साथ चलो। इस अप्सरा के

दर्शन मात्र ही से हम कृतार्थ हो जाएंगे।'

पापनाशी ने सोचा कि थायस को रंगशाला में देखना मेरे उद्देश्य के अनुकूल होगा। वह उस मनुष्य के साथ हो लिया। उनके सामने थोड़ी दूर पर रंगशाला स्थित थी। उसके मुख्य द्वार पर चमकते हुए परदे पड़े थे और उसकी विस्तृत वृत्ताकार दीवारें अनेक परतिमाओं से सजी हुई थीं। अन्य मनुष्यों के साथ यह दोनों पुरुष भी तंग गली में दाखिल हुए। गली के दूसरे सिरे पर अर्द्धचन्द्र के आकार का रंगमंच बना हुआ था जो इस समय परकाश से जगमगा रहा था। वे दर्शकों के साथ एक जगह पर बैठे। वहां नीचे की ओर किसी तालाब के घाट की भांति सीढ़ियों की कतार रंगशाला तक चली गयी थी। रंगशाला में अभी कोई न था, पर वह खूब सजी हुई थी। बीच में कोई परदा न था। रंगशाला के मध्य में कबर की भांति एक चबूतरासा बना हुआ था। चबूतरे के चारों तरफ रावटियां थीं। रावटियों के सामने भाले रखे हुए थे और लम्बीलम्बी खूंटियों पर सुनहरी ालें लटक रही थीं। स्टेज पर सन्नाटा छाया हुआ था। जब दर्शकों का अर्धवृत्त ठसाठस भर गया तो मधुमक्खियों की भिनभिनाहटसी दबी हुई आवाज आने लगी। दर्शकों की आंखें अनुराग से भरी हुई, वृहद निस्तब्ध रंगमंच की ओर लगी हुई थीं। स्त्रियां हंसती थीं और नींबू खाती थीं और नित्यपरति नाटक देखने वाले पुरुष अपनी जगहों से दूसरों को हंसहंस पुकारते थे।

पापनाशी मन में ईश्वर की परार्थना कर रहा था और मुंह से एक भी मिथ्या शब्द नहीं निकलता था, लेकिन उसका साथी नाट्यकाल की अवनति की चचार करने लगा- 'भाई, हमारी इस कला का घोर पतन हो गया है। पराचीन समय में अभिनेता चेहरे पहनकर कवियों की रचनाएं उच्च स्वर से गाया करते थे। अब तो वह गूंगों की भांति अभिनय करते हैं। वह पुराने सामान भी गायब हो गये। न तो वह चेहरे रहे जिनमें आवाज को फैलाने के लिए धातु की जीभ बनी रहती थी, न वह ऊंचे खड़ाऊं ही रह गये जिन्हें पहनकर अभिनेतागण देवताओं की तरह लम्बे हो जाते थे, न वह ओजस्विनी कविताएं रहीं और न वह मर्मस्पर्शी अभिनयचातुर्य। अब तो पुरुषों की जगह रंगमंच पर स्त्रियों का दौरदौरा है, जो बिना संकोच के खुले मुंह मंच पर आती हैं। उस समय के यूनाननिवासी स्त्रियों को स्टेज पर देखकर न जाने दिल में क्या कहते। स्त्रियों के लिए जनता के सम्मुख मंच पर आना घोर लज्जा की बात है। हमने इस कुपरथा को स्वीकार करके अपने माध्यात्मिक पतन का परिचय दिया है। यह निर्विवाद है कि स्त्री पुरुष का शत्रु और मानवजाति का कलंक है।

पापनाशी ने इसका समर्थन किया- 'बहुत सत्य कहते हो, स्त्री हमारी पराणघातिका है। उससे हमें कुछ आनन्द पराप्त होता है और इसलिए उससे सदैव डरना चाहिए।'

उसके साथी ने जिसका नाम डोरियन था, कहा- 'स्वर्ग के देवताओं की शपथ खाता हूं; स्त्री से पुरुष को आनन्द नहीं पराप्त होता, बल्कि चिन्ता, दुःख और अशान्ति। परेम ही हमारे दारुणतम कष्टों का कारण है। सुनो मित्र, जब मेरी तरुणावस्था थी तो मैं एक द्वीप की सैर करने गया था और वहां मुझे एक बहुत बड़ा मेंहदी का वृक्ष दिखाई दिया जिसके विषय में यह दन्तकथा परचलित है कि फीडरा जिन दिनों हिमोलाइट पर आशिक थी तो वह विरहदशा में इसी वृक्ष के नीचे बैठी रहती थी और दिल बहलाने के लिए अपने बालों की सुइयां निकालकर इन पत्तियों में चुभाया करती थी। सब पत्तियां छिद गयीं। फीडरा की परेमकथा तो तुम जानते ही होगे। अपने परेमी का सर्वनाश करने के पश्चात वह स्वयं गले में फांसी डाल, एक हाथीदांत की खूंटी से लटकर मर गयी। देवताओं की ऐसी इच्छा हुई कि फीडरा की असह्य विरहवेदना के चिह्नस्वरूप इस वृक्ष की पत्तियों में नित्य छेद होते रहे। मैंने एक पत्ती तोड़ ली और लाकर उसे अपने पलंग के सिरहाने लटका दिया कि वह मुझे परेम की कुटिलता की याद दिलाती रहे और मेरे गुरु,

अमर एपिक्युरस के सिद्धान्तों पर अटल रखे, जिसका उद्देश्य था कि कुवासना से डरना चाहिए। लेकिन यथार्थ में परेम जिगर का एक रोग है और कोई यह नहीं कह सकता कि यह रोग मुझे नहीं लग सकता।'

पापनाशी ने परश्न किया-'डोरियन, तुम्हारे आनन्द के विषय क्या हैं ?'

डोरियन ने खेद से कहा-'मेरे आनन्द का केवल एक विषय है, और वह भी बहुत आकर्षक नहीं। वह ध्यान है जिसकी पाचनशक्ति दूषित हो गयी हो उसके लिए आनन्द का और क्या विषय हो सकता है ?'

पापनाशी को अवसर मिला कि वह इस आनन्दवादी को आध्यात्मिक सुख की दीक्षा दे जो ईश्वराधना से पराप्त होता है। बोला-'मित्र डोरियन; सत्य पर कान धरो, और परकाश गरहण करो।'

लेकिन सहसा उसने देखा कि सबकी आंखें मेरी तरफ उठी हैं और मुझे चुप रहने का संकेत कर रहे हैं। नाट्यशाला में पूर्ण शान्ति स्थापित हो गयी और एक क्षण में वीरगान की ध्वनि सुनाई दी।

खेल शुरू हुआ। होमर की इलियड का एक दुःखान्त दृश्य था। ट्रोजन युद्ध समाप्त हो चुका था। यूनान के विजयी सूरमा अपनी छोलदारियों से निकलकर कूच की तैयारी कर रहे थे कि एक अद्भुत घटना हुई। रंगभूमि के मध्यस्थित समाधि पर बादलों का एक टुकड़ा छा गया। एक क्षण के बाद बादल हट गया और एशिलीस का परेत सोने के शस्त्रों से सजा हुआ परकट हुआ। वह योद्धाओं की ओर हाथ फैलाये मानो कह रहा है, हेलास के सपूतो, क्या तुम यहां से परस्थान करने को तैयार हो ? तुम उस देश को जाते हो जहां जाना मुझे फिर नसीब न होगा और मेरी समाधि को बिना कुछ भेंट किये ही छोड़े जाते हो।

यूनान के वीर सामन्त, जिनमें वृद्ध नेस्टर, अगामेमनन, उलाइसेस आदि थे, समाधि के समीप आकर इस घटना को देखने लगे। पिरस ने जो एशिलीस का युवक पुत्र था, भूमि पर मस्तक झुका दिया। उलीस ने ऐसा संकेत किया जिससे विदित होता था वह मृतआत्मा की इच्छा से सहमत है। उसने अगामेमनन से अनुरोध किया-हम सबों को एशिलीस का यश मानना चाहिए, क्योंकि हेलास ही की मानरक्षा में उसने वीरगति पायी है। उसका आदेश है कि परायम की पुत्री, कुमारी पॉलिक्सेना मेरी समाधि पर समर्पित की जाए। यूनानवीरों, अपने नायक का आदेश स्वीकार करो !

किन्तु समराट अगामेमनन ने आपत्ति की-'ट्रोजन की कुमारियों की रक्षा करो। परायम का यशस्वी परिवार बहुत दुःख भोग चुका है।'

उसकी आपत्ति का कारण यह था कि वह उलाइसेस के अनुरोध से सहमत है। निश्चय हो गया कि पॉलिक्सेना एशिलीस को बलि दी जाए। मृत आत्मा इस भांति शान्त होकर यमलोक को चली गयी। चरित्रों के वार्त्तालाप के बाद कभी उत्तेजक और कभी करुण स्वरों में गाना होता था। अभिनय का एक भाग समाप्त होते ही दर्शकों ने तालियां बजायीं।

पापनाशी जो परत्येक विषय में धर्मसिद्धान्तों का व्यवहार किया करता था, बोला-'अभिनय से सिद्ध होता है कि सत्तहीन देवताओं का उपासक कितने निर्दयी होते हैं।

डोरियन ने उत्तर दिया-'यह दोष परायः सभी मतवादों में पाया जाता है। सौभाग्य से महात्मा एपिक्युरस ने, जिन्हें ईश्वरीय ज्ञान पराप्त था, मुझे अदृश्य की मिथ्या शंकाओं से मुक्त कर दिया।'

इतने में अभिनय फिर शुरू हुआ। हेक्युबा, जो पॉलिक्सेना की माता थी, उस छोलदारी से बाहर निकली जिसमें वह

कैद थी। उसके श्वेत केश बिखरे हुए थे, कपड़े फटकर तारतार हो गये थे। उसकी शोकमूर्ति देखते ही दर्शकों ने वेदनापूर्ण आह भरी। हेक्युबा को अपनी कन्या के विषादमय अन्त का एक स्वप्न द्वारा ज्ञान हो गया था। अपने और अपनी पुत्री के दुर्भाग्य पर वह सिर पीटने लगी। उलाइसेस ने उसके समीप जाकर कहा- 'पॉलिकसेना पर से अपना मातृस्नेह अब उठा लो। वृद्धा स्त्री ने अपने बाल नोच लिये, मुंह का नखों से खसोटा और निर्दयी योद्धा उलाइसेस के हाथों को चूमा, जो अब भी दयाशून्य शान्ति से कहता जान पड़ता था- 'हेक्युबा, धैर्य से काम लो। जिस विपत्ति का निवारण नहीं हो सकता, उसके सामने सिर झुकाओ। हमारे देश में भी कितनी ही माताएं अपने पुत्रों के लिए रोती रही हैं जो आज यहां वृक्षों के नीचे मोहनिद्रा में मग्न हैं। और हेक्युबा ने, जो पहले एशिया के सबसे समृद्धिशाली राज्य की स्वामिनी थी और इस समय गुलामी की बेड़ियों में जकड़ी हुई थी, नैराश्य से धरती पर सिर पटक दिया।'

तब छोलदारियों में से एक के सामने का परदा उठा और कुमारी पॉलिकसेना परकट हुई। दर्शकों में एक सनसनीसी दौड़ गयी। उन्होंने थायस को पहचान लिया। पापनाशी ने उस वेश्या को फिर देखा जिसकी खोज में वह आया था। वह अपने गोरे हाथ से भारी परदे को ऊपर उठाये हुए थी। वह एक विशाल परतिमा की भांति स्थिर खड़ी थी। उसके अपूर्व लोचनों से गर्व और आत्मोत्सर्ग झलक रहा था और उसके परदीप्त सौन्दर्य से समस्त दर्शकवृन्द एक निरुपाय लालसा के आवेग से थर्रा उठे !

पापनाशी का चित्त व्यग्र हो उठा। छाती को दोनों हाथों से दबाकर उसने एक ठण्डी सांस ली और बोला- 'ईश्वर ! तूने एक पराणी को क्योंकर इतनी शक्ति परादान की है?

किन्तु डोरियन जरा भी अशान्ति न हुआ। बोला- 'वास्तव में जिन परमाणुओं के एकत्र हो जाने से इस स्त्री की रचना हुई है उसका संयोग बहुत ही नयनाभिराम है। लेकिन यह केवल परकृति की एक क्रीड़ा है, और परमाणु जड़वस्तु है। किसी दिन वह स्वाभाविक रीति से विच्छिन्न हो जाएंगे। जिन परमाणुओं से लैला और क्लियोपेट्रा की रचना हुई थी वह अब कहां हैं ? मैं मानता हूं कि स्त्रियां कभीकभी बहुत रूपवती होती हैं, लेकिन वह भी तो विपत्ति और घृणोत्पादक अवस्थाओं के वशीभूत हो जाती हैं। बुद्धिमानों को यह बात मालूम है, यद्यपि मूर्ख लोग इस पर ध्यान नहीं देते।'

योगी ने भी थायस को देखा। दार्शनिक ने भी। दोनों के मन में भिन्नभिन्न विचार उत्पन्न हुए। एक ने ईश्वर से फरियाद की, दूसरे ने उदासीनता से तत्त्व का निरूपण किया। इतने में रानी हेक्युबा ने अपनी कन्या को इशारों से समझाया, मानो कह रही है- इस हृदयहीन उलाइसेस पर अपना जादू डाल ! अपने रूपलावण्य, अपने यौवन और अपने अश्रुपरवाह का आश्रय ले।

थायस, या कुमारी पॉलिकसेना ने छोलदारी का परदा गिरा दिया। तब उसने एक कदम आगे बाया, लोगों के दिल हाथ से निकल गये। और जब वह गर्व से तालों पर कदम उठाती हुई उलाइसेस की ओर चली तो दर्शकों को ऐसा मालूम हुआ मानो वह सौन्दर्य का केन्द्र है। कोई आपे में न रहा। सबकी आंखें उसी ओर लगी हुई थीं। अन्य सभी का रंग उसके सामने फीका पड़ गया। कोई उन्हें देखता भी न था।

उलाइसेस ने मुंह फेर लिया और मुंह चादर में छिपा लिया कि इस दया भिखारिनी के नेत्रकटाक्ष और परेमालिंगन का जादू उस पर न चले। पॉलिकसेना ने उससे इशारों से कहा- 'मुझसे क्यों डरते हो ? मैं तुम्हें परेमपाश में फंसाने नहीं आयी हूं। जो अनिवार्य है, वह होगा। उसके सामने सिर झुकाती हूं। मृत्यु का मुझे भय नहीं है। परायम की लड़की और

वीर हेक्टर की बहन, इतनी गयीगुजरी नहीं है कि उसकी शय्या, जिसके लिए बड़ेबड़े समराट लालायित रहते थे, किसी विदेशी पुरुष का स्वागत करे। मैं किसी की शरणागत नहीं होना चाहती।'

हेक्युबा जो अभी तक भूमि पर अचेतसी पड़ी थी सहसा उठी और अपनी पिरय पुत्री को छाती से लगा लिया। यह उसका अन्तिम नैराश्यपूर्ण आलिंगन था। पतिवंचित मातृहृदय के लिए संसार में कोई अवलम्ब न था। पॉलिक्सेना ने धीरेसे माता के हाथों से अपने को छुड़ा लिया, मानो उससे कह रही थी- 'माता, धैर्य से काम लो ! अपने स्वामी की आत्मा को दुखी मत करो। ऐसा क्यों करती हो कि यह लोग निदर्यता से जमीन पर गिरकर मुझे अलग कर लें ?'

थायस का मुखचन्द्र इस शोकावस्था में और भी मधुर हो गया था, जैसे मेघ के हलके आवरण से चन्द्रमा। दर्शकवृन्द को उसने जीवन के आवेशों और भावों का कितना अपूर्व चित्र दिखाया ! इससे सभी मुग्ध थे ! आत्मसम्मान, धैर्य, साहस आदि भावों का ऐसा अलौकिक, ऐसा मुग्धकर दिग्दर्शन कराना थायस का ही काम था। यहां तक कि पापनाशी को भी उस पर दया आ गयी। उसने सोचा, यह चमकदमक अब थोड़े ही दिनों के और मेहमान हैं, फिर तो यह किसी धमार्श्रम में तपस्या करके अपने पापों का परायश्चित्त करेगी।

अभिनय का अन्त निकट आ गया। हेक्युबा मूर्छित होकर गिर पड़ी, और पॉलिक्सेना उलाइसेस के साथ समाधि पर आयी। योद्धागण उसे चारों ओर से घेरे हुए थे। जब वह बलिवेदी पर च़ी तो एशिलीज के पुत्र ने एक सोने के प्याले में शराब लेकर समाधि पर गिरा दी। मातमी गीत गाये जा रहे थे। जब बलि देने वाले पुजारियों ने उसे पकड़ने को हाथ फैलाया तो उसने संकेत द्वारा बतलाया कि मैं स्वच्छन्द रहकर मरना चाहती हूं, जैसाकि राजकन्याओं का धर्म है। तब अपने वस्त्रों को उतारकर वह वजर को हृदयस्थल में रखने को तैयार हो गयी। पिरस ने सिर फेरकर अपनी तलवार उसके वक्षस्थल में भोंक दी। रुधिर की धारा बह निकली। कोई लाग रखी गयी थी। थायस का सिर पीछे को लटक गया, उसकी आंखें तिलमिलाने लगीं और एक क्षण में वह गिर पड़ी।

योद्धागण तो बलि को कफन पहना रहे थे। पुष्पवर्षा की जा रही थी। दर्शकों की आर्तध्वनि से हवा गूंज रही थी। पापनाशी उठ खड़ा हुआ और उच्चस्वर से उसने यह भविष्यवाणी की- 'मिथ्यावादियों, और परेतों के पूजने वालों ! यह क्या भ्रम हो गया है ! तुमने अभी जो दृश्य देखा है वह केवल एक रूपक है। उस कथा का आध्यात्मिक अर्थ कुछ और है, और यह स्त्री थोड़े ही दिनों में अपनी इच्छा और अनुराग से, ईश्वर के चरणों में समर्पित हो जाएगी।

इसके एक घण्टे बाद पापनाशी ने थायस के द्वार पर जंजीर खटखटायी।

थायस उस समय रईसों के मुहल्ले में, सिकन्दर की समाधि के निकट रहती थी। उसके विशाल भवन के चारों ओर सायेदार वृक्ष थे, जिनमें से एक जलधारा कृत्रिम चट्टानों के बीच से होकर बहती थी। एक बुयि हब्शिन दासी ने जो मुंदरियों से लदी हुई थी, आकर द्वार खोल दिया और पूछा- 'क्या आज्ञा है ?'

पापनाशी ने कहा- 'मैं थामस से भेंट करना चाहता हूं। ईश्वर साक्षी है कि मैं यहां इसी काम के लिए आया हूं।'

वह अमीरों केसे वस्त्र पहने हुए था और उसकी बातों से रोब पटकता था। अतएव दासी उसे अन्दर ले गयी। और बोली- 'थायस परियों के कुंज में विराजमान है।'